ಕರ್ನಾಟಕ ರಾಜ್ಯ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ
ಮಾನಸಗಂಗೋತ್ರಿ, ಮೈಸೂರು – 570 006.

Karnataka State Open University
Manasagangothri, Mysore - 570 006.

आधुनिक हिन्दी गद्य एवं नाटक, निबन्ध, उपन्यास, कहानी

M. A. Previous HINDI
Course / Paper - III

एकांकी वैभव

Block - 7

ಉನ್ನತ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕಾಗಿ ಇರುವ ಅವಕಾಶಗಳನ್ನು ಹೆಚ್ಚಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮತ್ತು ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪ್ರಜಾತಂತ್ರೀಕರಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾನಿಲಯ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯನ್ನು ಆರಂಭಿಸಲಾಗಿದೆ.

ರಾಷ್ಟ್ರೀಯ ಶಿಕ್ಷಣ ನೀತಿ 1986

The Open University system has been initiated in order to augment opportunities for higher education and as an instrument of democratising education.

National Education Policy 1986

प्रथम एम.ए. - कोर्स तीसरा

Course - III, Paper - III

7

''आधुनिक गद्य एवं निबंन्ध, नाटक, नाटिका, एकाँकी, उपन्यास और कहानी साहित्य''

''एकाँकी वैभव''

Unit No. 27 to 31 अनुक्रमणिका		Page No.
इकाई 27	एकांकी वैभव	1 - 24
इकाई 28-ए	स्ट्राइक - भुवनेश्वर	25 - 38
इकाई 28-बी	एक दिन - श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र	39 - 54
इकाई 29-ए	राजपूत की हार - सुदर्शन	55 - 66
इकाई 29-बी	महाभारत की सांझ - भरतभूषण अग्रवाल	67 - 78
इकाई 30-ए	नये मेहमान - उदयशंकर भट्ट	79 - 90
इकाई 30-बी	प्रतिशोध - रामकुमार वर्मा	91 - 106
इकाई 31-ए	सीमारेख - विष्णु प्रभाकर	107 - 118
इकाई 31-बी	वसन्त - अज्ञेय	119 - 126
इकाई 31-सी	नीली झील - धर्मवीर भारती	127 - 130

पाठ्यक्रम अभिकल्प तथा संपादकीय समिति

प्रो.एम.जी.कृष्णन
उप कुलपति तथा अध्यक्ष
क. रा. मु. वि. विद्यालय,
मैसूर - 6

प्रो.एस.एन.विक्रमराज अरस
डीन (शैक्षणिक) - संयोजक
क. रा. मु. वि. विद्यालय
मैसूर - 6

प्रो.के.एस.रंगप्पा
उप कुलपति महोदय तथा
संपादकीय समिति के अध्यक्ष
क.रा.मु.वि.विद्यालय,
मैसूर - 6

डीन (शैक्षणिक) - संयाजक
क.रा.मु.वि. विद्यालय
मैसूर - 6

डॉ.कांबले अशोक
अध्यक्ष , हिन्दी विभाग
क.रा.मु.वि.विद्यालय, मानस गंगोत्री
मैसूर - 6

संयोजक

डॉ.एम.विमला
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
ज्ञानभारती, बेंगलूर विश्वविद्यालय
बेंगलूर - 56.

संपादिका

पाठ्यक्रम की लेखिका

डॉ.प्रतिभा मुदलियार
रीडर, हिन्दी विभाग
मैसूर विश्वविद्यालय
मैसूर.

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर, शैक्षणिक अनुभाग द्वारा निर्मित ।

सभी अधिकार सुरक्षित । कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय से लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना, इस कार्य के किसी भी अंश को किसी भी रूप में अनुलिपित या किसी अन्य माध्यम द्वारा प्रतिकृति नहीं किया जाएगा ।

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम पर अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मानस गंगोत्री, मैसूर - 6 से प्राप्त की जा सकती है ।

कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से **रजिस्ट्रार (प्रशासन)** द्वारा मुद्रित व प्रकाशित ।

ब्लाक परिचय

प्रिय विद्यार्थी,

कोर्स - एक में आपने **'कर्नाटक संस्कृति एवं कन्नड़ साहित्य'** का अध्ययन किया ।

कोर्स - दो में आपने **'आधुनिक हिन्दी काव्य'** के बारे में अध्ययन किया और कविवर **'जयशंकर प्रसाद'**, **'मैथिलीशरण गुप्त'**, **'रामधरी सिंह दिनकर'** और **'सूर्यकांत त्रिपाठी निराला'** तथा **'नयी कवियों'** के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं ।

अब आप **कोर्स - तीन** में **'आधुनिक गद्य एवं निबन्ध'** में हिन्दी के निबंध, नाटक, नाटिका, कहानी, एकांकी और उपन्यास के बारे में जानेंगे और 'जयशंकर प्रसाद विरचित 'ध्रुवस्वामिनी' भारतेन्दु कृत 'चन्दावली नाटिका' और 'हिन्दी के श्रेष्ठ निबन्ध' तथा 'एकाँकी वैभव' का भी अध्ययन करेंगे । 'कहानी कौस्तुभ' नामक कहानी संकलन का भी अध्ययन करेंगे । इसके अलावा आप 'जैनेन्द्र' कृत 'त्याग पत्र' तथा भीष्म साहनी का 'तमस्' उपन्यासों के बारे में भी जानकारी प्राप्त करेंगे । इससे आपने आधुनिक गद्य तथा नाटक, नाटिका, एकाँकी और उपन्यास, कहानी से परिचित होंगे ही ।

कार्स तीन - ब्लाक - एक में आपने हिन्दी निबंध साहित्य, आचार्य शुक्ल और उनके निबंध - 'श्रद्धा-भक्ति' और 'उत्साह', हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध, विष्णु प्रभाकर के निबंध तथा विद्यानिवास मिश्र और उनके निबंध के बारे में और **ब्लाक - दो** में आपने विष्णु प्रभाकर के निबंध, विद्यानिवास मिश्र और उनके निबंध एवं नाटिका चन्द्रावली के बारे में एवं **ब्लाक - तीन** में आपने नाटिका चन्द्रावली में प्रेम और भक्ति का स्वरूप, भाषा और काव्य-तत्व और नाटक ध्रुवस्वामिनी में नाटक का स्वरूप और विवेचन एवं नाटककार प्रसाद के बारे में तथा **ब्लाक - चार** में नाटककार प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी के प्रमुख पात्रों की परिचय और गौण पात्रों का परिचय के बारे में और **ब्लाक - पाँच** में उपन्यास का उद्‌भव और विकास, उपन्यास के तत्व, प्रकार, महत्व, उपन्यासकार जैनेन्द्र की उपन्यास कला, त्यागपत्र की कथावस्तु एवं त्यागपत्र में आदर्शवाद और यथार्थवाद के बारे में और **ब्लाक - छः** में भीष्म साहनी कृत उपन्यास **'तमस्'** में ....., कथासार, उपन्यासों की तत्वों की आधार पर 'तमस', चरित्र-चित्रण ..... के बारे में जानकारी प्राप्त कर लिया ।

अब आप **ब्लाक सात** में एकांकी वैभव, स्ट्राइक - भुवनेश्वर, एक दिन - श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र, राजपूत की हार - सुदर्शन, महाभारत की सांझ - भरतभूषण अग्रवाल, नये मेहमान - उदयशंकर भट्ट, प्रतिशोध - रामकुमार वर्मा, सीमारेखा - विष्णु प्रभाकर, वसन्त - अज्ञेय, नीली झील - धर्मवीर भारती के बारे में जानकारी प्राप्त करने वाले हैं ।

शुभकामनाओं के साथ,

डॉ. कांबले अशोक
अध्यक्ष , हिन्दी विभाग
क.रा.मु.वि. विद्यालय
मानस गंगोत्री
मैसूर - 6.

इकाई सत्ताईस : एकांकी वैभव

इकाई की रूपरेखा

27.0. उद्देश्य

27.1. प्रस्तावना

27.2. भूमिका

27.3. एकांकी क्या है ?

27.4. डॉ.रामकुमार वर्मा

27.5. हिन्दी साहित्य कोश

27.6. उपेन्द्रनाथ अश्क

27.7. डॉ.नगेन्द्र

27.8. पिंकर्ड ईटन

27.9. परसीवियड वाइल्ड

27.10. जैनेन्द्रकुमार जी के अनुसार

27.11. विशेषताएँ

27.12. नाटक और एकाँकी में अंतर

27.13. एकांकी कला के तत्वों का विवेचन

27.13.1. कथावस्तु

27.13.2. पात्र एवं चरित्र-चित्रण

27.13.3. कथोपकथन या संवाद

27.13.4. संकलनत्रय

27.13.5. उद्देश्य

27.13.6. भाषा और शैली

27.13.7. शीर्षक

27.14. एकांकी के भेद

27.14.1. तकनीक या रचना-प्रकार के आधार पर

27.14.2. मूल प्रवृत्तियों के आधार पर

27.14.3. विषय-वस्तु के आधार पर

27.14.4. संदेश के आधार पर

27.14.5. अभिनेयता के आधार पर

27.14.6. अन्य

27.15. कहानी और एकाँकी में अंतर

27.16. बोध प्रश्न

27.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आप भीष्म साहनी से कृत बहु चर्चित उपन्यास 'तमस' के बारे में सविस्तार रूप से अध्ययन किया और 'तमस' में चित्रित समस्याएँ आदि के बारे में जानकारी भी प्राप्त कर लीं ।

27.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आप 'एकाँकी' के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं । इसमें विभिन्न विद्वानों की राय तथा एकाँकी और नाटक में अंतर भी आप समझ सकेंगे । इसके अध्ययन के बाद आपको एकाँकी के भेद और एकाँकी के प्रवृत्ति, संदेश, अभिनेयता आदि के बारे में जानकारी मिलेगी । इसके अलावा नाटक और एकाँकी के अंतर और कहानी और एकाँकी के अंतर के बारे में भी जानकारी मिलेगी ।

27.2. भूमिका

'काव्येषु नाटकं रम्यम्' यह संस्कृत की एक प्रसिद्ध उक्ति है जिसके अनुसार नाटक काव्य की समस्त विधाओं में अत्यंत रमणीय एवं मनोहारिणी विधा है । नाटक की उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है । तथापि भरत के नाट्यशास्त्र में आनेवाली यह कथा नाटक की उत्पत्ति की ओर संकेत करती है कि आत्रेयादि ऋषियों ने भरतमुनी से प्रश्न किया कि नाट्य वेद कैसे उत्पन्न हुआ ? किसके लिए इसकी आवश्यकता थी, इसके अंग कौन-कौन से हैं ? इसका आधार क्या है ? और इसका प्रयोग किस प्रकार किया जाय ? इस जिज्ञासा के उत्तर में भरतमुनि ने कहा - 'एक बार वैवस्वत मनु के दूसरे युग में लोग बहुत दुःखित हुए । तब इन्द और अन्य देवताओं ने जाकर ब्रह्माजी से प्रार्थना की कि आप मनोविनोद के लिए कोई ऐसा साधन उत्पन्न कीजिए जिसके द्वारा

सबका चित्त प्रसन्न हो ! इस पर ब्रह्मा ने चारों वेदों को बुलाया और उन चारों की सहायता से उन्होंने पचंम वेद नाट्यशास्त्र की रचना की । इसके लिए ऋग्वेद से संवाद, सामवेद से गान, यजुर्वेद से नाट्य, और अथर्ववेद से रस लिया था ।

आगे इस बात का भी विश्वास किया गया है कि नाट्यशास्त्र की समृद्धि में हमारे देवी-देवताओं का भी अपना योगदान है, यथा - रंगमंच का निर्माण विश्वकर्मा ने किया, शंकर ने तांडव नृत्य दिया, पार्वती ने लास्य नृत्य दिया और विष्णु ने चार नाट्य शैलियाँ दीं ।

नाटक की व्यापकता और उसके सार्वभौमत्व की ओर संकेत करते हुए **भरत** स्वीकारते हैं कि संसार में ऐसा ज्ञान, शिल्प, विद्या, कला, योग आदि कोई ऐसा कर्म नहीं है जो नाट्य साहित्य में प्रदर्शित न किया जा सके ।

भारतीय नाट्य शास्त्र की लंबी परंपरा है जिसका मूल उत्स वैदिककाल में है । इसका सम्मान पंचमवेद के रूप में हुआ, इसके उपादान रहे । आख्यान, ज्ञान, अभिनय और रस । नाट्य या नाच और गान से नाटकों ने प्रेरणा ग्रहण की है जिसमें उपरोक्त अंशों के अलावा संवादों का विशेष महत्व है जो कि दर्शक और अभिनेता के बीच संपर्क स्थापित करने में काम आए हैं ।

पाश्चात्यों ने नाटक की उत्पत्ति के बारे में अलग-अलग परिकल्पनाएँ की हैं । डॉ.रिजवे नाटक की उत्पत्ति का कारण मृतक वीरों की पूजा मानते हैं । इनके अनुसार पूर्वजों एवं वीर पुरुषों की स्मृति में नाचने गाने की प्रथा से नाटक का विकास हुआ है । जर्मन विद्वान पिशेल नाट्य की उत्पत्ति पुत्तलिका नृत्य से मानते हैं ।

कुछ विद्वानों ने लोक-नृत्यों को नाटक का मूल उत्स माना है तो कुछ ने हमारे प्राचीन महाकाव्यों में नाटकों की आरंभिक

जड़ों को ढूँढने का प्रयत्न किया है । इस प्रकार हम देखते हैं कि नाटक की उत्पत्ति के बारे में असंख्य अभिप्राय और कल्पनाएँ हैं जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि मनुष्य ने जब से अपना सामाजिक जीवन शुरु किया, तब से अभिनय उसके जीवन का अभिन्न अंग रहा है जिसने बाद में नाटक का रूप ग्रहण किया है ।

नाटक मनुष्य जीवन का समग्र अवलोकन प्रस्तुत करता है । नाटक दृश्यकाव्य होने के कारण यहाँ पात्र अभिनय द्वारा लोक का अनुकरण प्रस्तुत करते हैं, उसकी वेदना एवं खुशियों को अपने साथ लेकर नाटक के पात्र जब रंगमंच पर अनुकृति में लगते हैं तो दर्शक उनमें इस प्रकार घुलमिल जाते हैं कि वहाँ से भरतमुनि के शब्दों में मनोरंजन, हितोपदेश और शांति पाते हैं अर्थात् नाटक दर्शकों की तुष्टि करने के सफल माध्यम हैं ।

संस्कृत साहित्य में भी नाटकों का विकास दो रूपों में हुआ है । आदर्शमूलक नाटक यानी मानवता का उदात्त रूप प्रकट करनेवाले नाटक जिनमें महान् राजा के धीरोदात गुणों की कल्पना की जाती थी तो यथार्थमूलक नाटकों में समाज की यथार्थताओं पर प्रकाश डाला जाता था । शाकुंतला और मृच्छकटिक इस बात के उदाहरण हैं । हिन्दी के संदर्भ में भारतेन्दु के नाटक 'हरिश्चन्द्र' और 'पाखंड विडंबना' का उल्लेख किया जा सकता है । आदर्श एवं यथार्थपरक नाटकों की परंपरा भी लंबी है ।

नाटक की परंपरागत परिभाषा एवं उसके स्वरूप में काफी परिवर्तन उत्तरोत्तर दिनों में देखे गये हैं । पौराणिक ऐतिहासिक एवं धार्मिक वस्तुओं की चहुँ और हमारे प्राचीन नाटक केन्द्रीकृत हुए थे । किंतु समय के साथ-साथ इनकी संवेदना भी बदलती आई है । आधुनिक युग में नाटक अपने समय और समाज के प्रति प्रतिबद्ध हैं । इन नाटकों में मनोरंजन की अपेक्षा मनुष्य की कुंठाओं, आदर्शमूलक गुणों के वैभवीकरण की अपेक्षा उसके अंतर्द्वन्द्वों और यथार्थताओं का चित्रण मिलता है । आज के नाटकों

में व्यक्ति के प्रति आराधना-भाव नहीं है जैसे प्राचीन नाटकों में राजा के प्रति होता था ।

भारतीय पुनरुत्थान युग के दौरान हुए वैचारिक आंदोलनों ने भारतीय जन-मानस को इस प्रकार आंदोलित किया जिन्होंने प्राचीन मूल्यों और मान्यताओं को नए सिर से सोचने को मजबूर किया, फिर स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद स्वार्थ, गुटबंदी, हर कही मूल्यों का विघटन, कुर्सी-मोह के पीछे पागल हुए हमारे नेताओं का जीवन विधान आदि ने भारतीय जनता का मोहभंग किया । सुखी राष्ट्र के सपने जो स्वतंत्रता-पूर्व दिनों में देखे थे, वे बाद के दिनों में साकार न हुए तो सामाजिक जीवन में अतृप्ति और असंतोष की लहरें चलने लगीं । स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय नाटकों के स्वरूप में जो बदलाव आया उस ओर संकेत करते हुए डॉ.सुरेश अवस्थी लिखते हैं - स्वतंत्रता के उपरांत हमारे जीवन में जो नया उन्मेष आया, उसने जीवन के सभी पक्षों और क्रियाकलापों को प्रभावित किया । भारतीय रंगमंच की यह चेतना इसी व्यापक सांस्कृतिक पुनरुत्थान का परिणाम है । यदि हम इस नयी चेतनावले रंगमंच आंदोलन को एक व्यापक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में देखें तो उसके उदय के स्रोत और विकास के चरण सहज ही स्पष्ट हो जायेंगे । भारतीय रंगमंच के सामान्य विद्यार्थी को भी यह ज्ञात है कि हमारी संस्कृत नाट्य परंपरा नवीं-दसवीं शताब्दी में विघटित होकर नष्ट हो गयी और उसके बाद पारंपरिक और लोक नाटकों के रूप में हमारा रंगमंचीय क्रियाकलाप क्षीणरूप में जीवित रहा । आधुनिक रंगमंच का उदय उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में पाश्चात्य नाटक साहित्य और रंगमंच परंपरा के सीधे प्रभाव से हुआ ।'

एकाँकी वर्तमान युग की लोकप्रिय एवं लोकरंजक विधा है जिसने आधुनिक युग की संदेदनाओं और समस्याओं को अत्यंत कलात्मक रूप से प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है । विद्वानों ने एकाँकी नाटक का मूल उत्स खोजने का प्रयास किया है, किंतु उनमें मतैक्य नहीं हैं । एकाँकी के मूल को **भरत** के नाट्यशास्त्र में

देखने का प्रयत्न भी किया गया है । नाट्यशास्त्र में रूपक और उपरूपकों के अट्टाईस भेदों में पंद्रह एक अंक वाले हैं ।

भारतीय साहित्य में नाटक को दृश्यकाव्य के अंतर्गत स्वीकार किया गया है । इन दृश्यकाव्यों को रूपक कहा गया है । ''भारतीय वाङ्मय में दृश्यकाव्य का विशेष महत्व माना जाता है । अत्यंत प्राचीन काल में ही इसका शास्त्रीय विवेचन जितने विस्तार के साथ भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' में हुआ, उनका श्रव्यकाव्य का नहीं' यद्यपि आदिकाव्य के नाम से महर्षी वाल्मीकि का रामायण ही प्रसिद्ध है और वह श्रव्य काव्य है । दृश्य काव्य के लिए हिन्दी में विशेष प्रचलित शब्द नाटक है । 'नाट्यशास्त्र' शब्द भी बतलाता है कि दृश्यकाव्य को 'नाटक' कहा जा सकता है । यद्यपि पारिभाषिक रूप में 'नाटक' शब्द का प्रयोग दृश्य काव्य के एक भेद के लिए होता है, तथापि हिन्दी में 'नाटक' शब्द इतना व्यापक हो गया कि वह दृश्य काव्य का पर्यायवाची बन गया है । दृश्य काव्य के लिए 'रूपक' शब्द का भी व्यवहार देखा जाता है । 'रूपक' शब्द का अर्थ है 'रूप का आरोप' । नाटक के अभिनय में अभिनेता या नट पर अभिनेय व्यक्तियों के रूप का आरोप होता है । इस प्रकार छोटे-बड़े के भेद से दृश्य काव्य के दो प्रकार माने जाते हैं - रूपक और उपरूपक । उनके बहुत से भेद शास्त्रों में गिनाये गए हैं - रूपक के दस और उपरूपक के अठारह ।''

इन रूपकों और उपरूपकों में ऐसी अनेक विधाएँ हैं जोकि एक अंक की हैं किंतु जिस अर्थ में आजकल एकाँकी का विकास हुआ है, उस अर्थ में उन रूपकों और उपरूपकों का प्रचलन नहीं हुआ है । 'हमारा आज का एकाँकी उनके एक अंकोवाले नाटय रूपों से किसी प्रकार मान्यता का संबंध नहीं रखता है, रूप और आत्मा दोनों में ही यह भारतीय नाट्य विधान से बाहर की वस्तु है । वस्तुतः इसके रूप का विकास पाश्चात्य नाट्य विधान के अंतर्गत ही हुआ है ... भारतीय साहित्य में वर्तमान एकांकी-नाटकों का प्रचलन पाश्चात्य साहित्य की प्रेरणा से ही हुआ है । इस

प्रकार हम देखते हैं कि एकांकी भारतीय नाट्यशास्त्र में चर्चित रूपक और उपरूपकों की अपेक्षा पांश्चात्य एकांकियों के प्रति अधिक ऋणी है ।

यह कहा जाता है कि पश्चिम में कहानियों और एकांकियों का उद्‌गम और विकाल बड़े पैमाने पर होने के लिए वहाँ की व्यस्तता कारण है । यस्ततावश लंबे नाटक और बड़े आकार के उपन्यासों के लिए समय निकाल पाना संभव नहीं हो पाया तो छोटे आकार के एकांकियों और कहानियों ने उन्हें कम समय में अधिक मनोरंजन और शिक्षा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी जबकि भारतीय संदर्भ में रूपकों का उद्‌गम उपरोक्त कारण से ही हुआ है ।

इंग्लैंड में एकांकियों के आविर्भाव के आरंभिक चरण की ओर निर्देश इस प्रकार किया गया है - 'इंग्लैंड में एकांकियों के आविर्भाव की कहानी रोचक है । इस यंत्रकांत युग में मध्यकाल के समय नाटक-प्रदर्शन के प्रारंभ में देर से नाटकशाला आनेवाले दर्शकों की प्रतीक्षा में तथा समय से पूर्व ही आए हुए दर्शकों के मनोरंजनार्थ यवनिका-उत्थापक (कर्टन-रैसर) के रूप में एकांकियों का आविर्भाव हुआ । एकांकी नाटक अपनी रोचकता तथा प्रभाविष्णुता के कारण प्रसिद्धि के पथ पर अग्रसर हुआ । परंतु 1903 की एक आकस्मिक घटना के कारण एकांकी का भविष्य खिल उठा । 1903 के अक्तूबर में वेस्ट एण्ड थियेटर में डब्ल्यू.डब्ल्यू.जैकब्स की एक छोटी कहानी 'मंकीज पा' को लुई एन.पार्कर्स ने यवनिका - उत्थापक के रूप में प्रस्तुत किया । वह एकांकी इतना रोचक तथा सुंदर बन पड़ा कि दर्शकों ने उस दिन के मुख्य नाटक को देखने की आवश्यकता ही नहीं समझी । सब उठकर चल दिए । इस घटना ने एकांकी को पूर्णत्व की ओर अग्रसर होने में प्रोत्साहित किया । इसी समय गिल्बर्ट, हेनरी आर्थर, आस्कर वाइल्ड आदि के आविर्भाव के साथ ही अंग्रेजी साहित्य में एक जागृति उत्पन्न हुई । परंतु इन सबसे अधिक नार्वे

के प्रसिद्ध कलाकार और विद्वान इब्सन के प्रभाव से इंग्लैंड में एकांकी नाटक काफी लोकप्रिय हो गए । जार्ज बर्नाड शा के आने से तो एकांकी नाटक के जगत में एक युगांतर ही उपस्थित हो गया । हिन्दी में पाश्चात्य जगत के लिए एकांकीकार का सीधा और गहरा प्रभाव पडी है, वह बर्नाड शा का है । वैसे तो इब्सन, ओ'नील, गैल्सवर्दी आदि का प्रभाव उपेक्षणीय नहीं है । सर्व प्रथम जिस एकांकीकार ने हिन्दी में पाश्चात्य प्रेरणा ग्रहण की वह भुवनेश्वर है ।'

27.3. एकांकी क्या है ?

एकांकी का अर्थ है एक अंकवाला नाटक । एक अंक का यह नाटक जीवन के किसी एक प्रसंग, एक अनुभव एक अंश की झांकी प्रस्तुत करता है जो अपने में पूर्ण रहता है । जैसे कहानी उपन्यास का संक्षिप्त रूप नहीं है वैसे एकांकी भी नाटक का संक्षिप्त अवतरण नहीं है । यह अपने में स्वतंत्र विधा है । आधुनिक युग में इस विधा का विकास साहित्य की अन्यान्य विधाओं के जैसे तीव्रगति से हुआ है । परिणामस्वरूप आधुनिक युग में एकांकी विधा का शास्त्रीय विवेचन विद्वानों ने किया है ।

एकांकी के स्वरूप और शिल्प के संबंध में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के कुछ अभिप्रायों को यहाँ उदृत किया जा रहा है जिनके अवलोकन से एकांकी का स्वरूप स्पष्ट उभर आता है ।

27.4. डॉ.रामकुमार वर्मा

एकांकी नाटक में एक ही घटना होती है और वह घटना नाटकीय कौशल से ही कौंतूहल का संचय करती हुई चरमसीमा तक पहुँचती है । उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं रहता । विस्तार के अभाव में वह घटना कली की भाँति खिलकर पुष्प की भाँति विकसित हो उठती है । उसमें लता के समान फैलने की उच्छृंखलता नहीं है ।'

27.5. हिन्दी साहित्य कोश

एकांकी नाटक साहित्य का वह नाट्यप्रधान रूप है जिसके माध्यम से मानवजीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक पार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि यह एक अविकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेता है ।

27.6. उपेन्द्रनाथ अश्क

बड़े नाटक की तुलना में एकांकी जीवन के एक अंश का पृथक और विच्छिन्न चित्र उपस्थित करता है, जीवन की झांकी मात्र देता है । विभिन्नता के बदले एकीकरण, विश्रृंखलता के बदले एकाग्रता, पूर्णता के बदले अपूर्णता, फैलाव के बदले सीमित्व, विस्तार के बदले संक्षिप्तता इसके गुण हैं ।

27.7. डॉ.नगेन्द्र

एकांकी में हमें जीवन का क्रमबद्ध विवेचन न मिलकर उसके एक पहलू, एक महत्वपूर्ण घटना, एक विशेष परिस्थिति अथवा एक उद्दीप्त क्षण का चित्र मिलेगा ।

भारतीय विद्वानों की भांति पाश्चात्य समीक्षकों ने भी एकांकी का स्वरूप विश्लेषण किया है ।

27.8. पिंकर्ड ईटन

एकांकी की प्रकृति ऐसी होती है कि उस में नाटककार को किसी विशेष समस्या, किसी विशेष परिस्थिति अथवा घटना का इस प्रकार नियोजन करना पड़ता है कि वह धीरे-धीरे अपने आप विकसित हो जाए ।

27.9. परसीवियड वाइल्ड

एकांकी कुछ मिनटों से लेकर पूरे एक घंटे तक नाट्यकार की इच्छानुसार फैलाया जा सकता है । इसमें एक या अनेक दृय हो सकते हैं किंतु उसका झुकाव एक्ट की और विशेष रूप से रहता है । यह उसी समय तक चलना चाहिए जब तक दर्शक बिना उकताए देखते रहें । उसमें लंबे लंबे वर्णनों की बहुलता न रहे जिनका मनोवैज्ञानिक महत्व बड़े नाटकों में रहता है ।

उपरोक्त वक्तव्यों से स्पष्ट है कि एकांकी वह लघु दृश्य रूप है जिसमें जीवन की किसी घटना, समस्या अथवा परिस्थिति की कलात्मक अभिव्यक्ति होती है और कम सेय में अधिक प्रभावकारी ढंग से न केवल मनोरंजन मिलता है अपितु चिंतन संबंधी विचारोत्तेजक सामग्री भी प्राप्त होती है ।

एकांकी को साहित्यिक विधा माननेवाले विद्वानों के अभिप्रायों को अब तब हमने देखा है । अब उन विद्वानों के अभिप्रायों को भी देख सकते हैं जो एकांकी-लेखन को गंभीर लेखन नहीं मानते हैं । उदाहरण के लिए चंद्रगुप्त विद्यालंकार का कहना है - 'एकांकी का साहित्य में कोई स्थान नहीं है । एकांकी 'विज्ञापनीय' वस्तु की खूबियाँ, प्रयोग, कीमत और मिलने का पता आदि सभी कुछ कर्णगोचर कर देने का साधन मात्र है । एकांकी नाटक की कोई निश्चित और निजी टेकनिक नहीं है और न बन पाई है । पात्रों के व्यक्तित्व का चित्रण अथवा विकास भी वहाँ नहीं किया जा सकता । एकांकी का ध्येय सिर्फ मनोरंजन अथवा अर्थपूर्ण वार्तालाप है, बस इतना ही, इससे अधिक कुछ नहीं । एकांकी नाटक लिखना बहुत आसान है । जो व्यक्ति मनोरंजक ढंग से थोड़ी सी बातचीत लिख सकता है, वह एकांकी नाटक भी लिख सकता है । भारतवर्ष में एकांकी नाटकों का लोक प्रियता कुछ अंशों तक रेडियों के कारण ही है । साहित्य में एकांकी का स्थान बहुत नगण्य है ।

27.10. जैनेन्द्रकुमार जी के अनुसार

प्रसिद्ध कथाकार जैनेन्द्रजी एकांकी को एक साहित्यिक विधा मानते हुए भी इसकी सीमाओं को रेखांकित करना नहीं भूलते । एकांकी नाटक कृत्रिम है क्योंकि इसकी रचना काल्पनिक स्टेज को ध्यान में रखकर की जाती है । उनमें जो कोष्टक लगते हैं वे तमाशा तक बन जाते हैं ।

उपरोक्त उद्धरणों में एकांकी की दो-एक सीमाओं की ओर विद्वान लेखकों ने अवश्य संकेत किया है मगर एकांकी को सहित्यिक विधा और अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम स्वीकार करने में संकोच का अनुभव करनेवाले इनके अभिप्रायों से पूर्णतः सहमत होना संभव नहीं है । एकांकी निश्चित रूप से एक ऐसी साहित्यिक विधा है, एक गंभीर माध्यम है जो किसी भी लेखक के लिए एक चुनौती बन सकता है । कहानी मात्र पढ़ी जाती है जबकि एकांकी पढ़ा और देखा जाता है । दूसरे शब्दों में पाठक और दर्शक समाज को समान रूप से विशिष्ट अनुभूति प्रदान करने और उनमें संवेदनाओं को जागृत्त करने का महत्वपूर्ण उत्तरयित्व एकांकीकार पर रहता है । समाज की अनेक समस्याओं में किसी एक ऐसी समस्या को चुनकर उसका कलात्मक निरूपण एक निश्चित परिधि में करना अपने आप में एक महत्वपूर्ण काम है । इस दृष्टि से एकांकी लिखना बायें हाथ का खेल नहीं है । एकांकी लेखन एक गंभीर कर्म है । आधुनिक एकांकीकारों ने एकांकी लेखन को गंभरता से स्वीकार करके इस एक विधा के रूप में प्रतिष्ठित किया है । फलतः आज का एकांकी साहित्य समृद्धि के शिखर पर है ।

27.11. विशेषताएँ

उपरोक्त विवेचन के प्रतिपेक्ष्य में एकांकी की निम्नांकित विशेषताएँ बता सकते हैं -

1. एकांकी में जीवन की किसी एक घटना या प्रसंग का निर्वाह होता है । एकांकी अपने में एक इकाई है, स्वयंपूर्ण है ।

2. एकांकी एक अंक का होता है, इसमें एक दृश्य या एक से अधिक दृश्य हो सकते हैं । किन्तु एकांकीकार को समय का ध्यान रखना पड़ता है । सफल एकांकी वही है जो एक बैठक में समाप्त हो । कम समय में अधिक लाभ करना करना एकांकी का लक्ष्य होना चाहिए ।
3. एकांकी में विषयांतर अथवा प्रसंगातर के लिए गुंजाइश बिलकुल नहीं है । सफल एकांकी को अपने लक्ष्य से कदापि चंचल नहीं होना चाहिए ।
4. कथावस्तु में कौतूहल, संघर्ष और गतिशीता का होना वांछनीय है । ये तीनों ऐसे अंश हैं जिनसे एकांकी में जीवंतता आती है । कथावस्तु को नाटकीय मोड देने में एकांकीकार को अत्यंत सावधान रहना चाहिए ।
5. एकांकी में अधिक पात्रों की गुंजाइश नहीं है । सीमित पात्रों के कुशल निर्वाह से एकांकी की समस्या सुंदर ढंग से उभरकर सामने आ सकती है । संवाद संक्षिप्त किंतु चुस्त होने चाहिए । एकांकी में लंबे-लंबे भाषण नुमा संवादों के लिए बिलकुल स्थान नहीं है । भाषा भी सरल और पनात्रोचित रहनी चाहिए ।
6. एकांकी का शीर्षक ऐसा आकर्षक होना चाहिए कि वह उसकी वस्तु या समस्या का निर्देश करने में सफल हो । और वह ऐसा रहना चाहिए कि दर्शकों का कुतूहल भी जागृत हो सके ।

27.12. नाटक और एकाँकी में अंतर

नाटक और एकांकी अलग-अलग विधा है । मात्र अभिनय इन दोनों में समान रूप से पाया जानेवाला अंश है । नाटक में जीवन का व्यापक चित्रण होता है, विभिद्व अनुभवों का विशाल कैनवास पर प्रस्तुत करने का प्रयास अनेक अंकों अनेक घटनाओं और पात्रों के द्वारा किया जाता है जबकि एकांकी का कैनवास ही सीमित है । यहाँ न अधिक घटनाएँ हो सकती हैं न पात्र ही

अधिक हो सकते हैं, यानी कम पात्रों द्वारा एक प्रसंग या घटना का निर्वाह करना वास्तव में इस विधा के लेखक को एक चुनौति का सामना करने के बराबर है । नाटक के लेखक को कुछ हद तक यह आजादी रहती है कि वह प्रसंगांतर करने अथवा स्वगत कथनों के द्वारा अपने विचारों एवं तर्कों का कुशलतापूर्वक मंडन कर सके । किंतु एकांकीकार को इधर-उधर झाँकने तक को भी मौका नहीं रहता है । एकांकीकार को एकदम चुस्त रहना पड़ता है, अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अत्यंत क्रियाशील रहना होता है । नाटक में उसके विस्तार गुण के कारण मंदगति आ सकती है जबकि एकांकी में गतिशीलता अनिवार्य धर्म है । नाटकों में अनेक पात्र होते हैं, कथोपकथन लंबे-लंबे भी हो सकते हैं मगर एकांकी में यथासंभव कम पात्र होने चाहिए । और यहाँ का हर शब्द अर्थपूर्ण और प्रभावकारी होना चाहिए । अनावश्यक रूप से यहाँ शब्दों का दुरुपयोग मना है ।

27.13. एकाँकी कला के तत्वों का विवेचन

एकांकी की सृजन प्रक्रिया में जिन अंशों को आधार माना गया है, उन्हें एकांकी के तत्व कह सकते हैं और वे हैं -
1. कथावस्तु, 2. पात्र एवं चरित्र चित्रण 3. कथोपकथन, 4. संकलनत्रय, 5. उद्देश्य, 6. भाषा और शैली, 7. शीर्षक

27.13.1. कथावस्तु

एकांकी की मूल चेतना कथावस्तु में है । कथावस्तु में आरंभ से लेकर अंततक कुतूहल एवं जिज्ञासा को रखकर आरोह-अवरोह के द्वारा नाटकीय मोड लेते हुए क्षिप्रगति से विकसित होने की क्षमता होनी चाहिए । एकांकी की कथावस्तु में इतिवृत्तात्मकता कम किंतु संकेत तत्व ज्यादा होते हैं । यानी एकांकी की कथावस्तु के अंतर्गत तीव्र अनुभूति एवं टेन्शन का होना आवश्यक है । एकांकी की कथावस्तु इतनी ठोस होनी चाहिए कि नाटकीय मोड लेने में वह सक्षम हो जिसके अभाव में एकांकी सफल नहीं हो पाता ।

एकांकी की कथावस्तु का विकास चार सोपानों में होता है - आरंभ, विकास, संघर्ष और चरमसीमा । एकांकी के आरंभ का अपना महत्व है क्योंकि यही से दर्शक (या पाठक) का कुतूहल जागृत होता है । एकांकी के सार्थक आरंभ की ओर इशारा करते हुए सिडनी वॉक्स कहते हैं - 'The movement the curtain is up, the audience must be brought into the world of Authur's imagination.' । इसके बाद कथावस्तु विकास, संघर्ष एवं द्वन्द्व के साथ गति पकड़ती है । आलोचकों का मानना है कि एकांकी का अवसान या अंत उसकी चरमसीमा पर होना चाहिए । मगर यहाँ प्रश्न यह है कि चरमसीमा पर ही एकांकी का अंत हो जाय तो उस बिंदु पर एकांकीकार का लक्ष्य अधूरा ही रहता है । हर लेखक अपनी रचना के द्वारा-कोई न कोई संदेश देना चाहता है जिसे वह चरमसीमा में नहीं अपितु संघर्ष के बाद के परिणामों के द्वारा ही दे सकता है । अतः कथावस्तु में चरमसीमा एवं उसके बाद के परिणामों का अपना महत्व है ।

27.13.2. पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कथावस्तु दर्शकों के सम्मुख पात्रों के द्वारा अनावरण होती है और इन्हीं के द्वारा विकसित भी होती है । लेखक के विचारों के, उसके 'दर्शन' के वाहक भी ये पात्र ही हैं । एकांकी अपने शिल्प से कथावस्तु और समय की सीमा में बन्धा हुआ होने के कारण, पात्रों की परिकल्पना करते समय लेखक को अत्यंत जागरूक रहना पड़ता है यानी पात्रों की संख्या एकांकी में यथासंभव कम होनी चाहिए । कथावस्तु से सीधा संबंध रखनेवाले पात्रों को छोड़कर अनावश्यक पात्रों को एकांकी में सर्वथा स्थान नहीं है तथापि कथावस्तु के निर्वाह के लिए जरूरी संदर्भ में ही उसे रखा जाना चाहिए । पात्रों की सृष्टि करते समय एकांकीकार को इस बात पर अवश्य ध्यान देना चाहिए कि पात्र आकर्षक बने, अस्वाभाविकता एवं असहजता उनमें आ न पाये । संक्षेप में

कथावस्तु में प्राण फुँकने का दायित्व चूँकि पात्रों का है, उन्हें प्राणवान बनाना अनावश्यक है ।

27.13.3. कथोपकथन या संवाद

एकांकी के पात्र कथावस्तु के वाहक है तो कथोपकथन उन पात्रों में जीवंतता और गरिमा लाते हैं । सार्थक एवं प्रभावकारी संवादों के अभाव में कथावस्तु भले ही कितना ही आकर्षक हो, वह प्रेषणीय नहीं बन सकती है । लेखकीय विचारों एवं संदेश यानी कथ्य को पाठकों या दर्शकों तक पहुँचने के लिए संवाद चुस्त होने चाहिए । ऐसे संवादों से नाटकीय माहौल का सृजन होता है, परिणामस्वरूप एकांकी सजीव होता है । हाँ, एकांकी के संवादों की अपनी सीमाएँ भी हैं क्योंकि एकांकी नाटक नहीं है । यहाँ लंबे-लंबे स्वगत कथन या भाषाणों के लिए कोई स्थान नहीं है । अतएव एकांकी के पात्रों को चाहिए कि वे संक्षिप्त, सारगर्भित और सहजता से युक्त संवाद बोले । कथावस्तु से हटकर एक भी संवाद बोलने का उतावलापन एकांकी के किसी भी पात्र को नहीं दिखाना चाहिए ।

27.13.4. संकलनत्रय

एकांकी में संकलनत्रय का होना आवश्यक है । काल, स्थान और कार्य के कुशल समायोजन को संकलनत्रय कहते हैं । एकांकी में इन तीनों की अन्विति रहनी चाहिए । ये तीनों एक दूसरे के पूरक हैं । एकांकी की वस्तु का निर्वाह करते समय एकांकीकार को हमेशा इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि वह काल, स्थान और कार्य से कहीं हट न जाएँ । एकांकी में विभिन्न स्थानों पर घटनेवाली घटनाओं का समायोजन करते हुए कार्य की गतिशीलता को दिखाना आसान नहीं है । अतः इन तीनों को एक ही स्थान और काल में दिखाना अच्छा रहता है । डॉ.समकुमार वर्मा के अनुसार एकांकी नाटक में संकलन-त्रय पर ध्यान देना

आवश्यक है । उनके शब्दों में 'एक संपूर्ण कार्य एक ही स्थान पर, एक ही समय में घटित हो । यदि स्थानों और अवसरों की विविधता उपस्थित की गई तो अन्य नाटकों की शैली से एकांकी-नाटक शैली में अंतर ही क्या रहा ? '

एकांकी में संकलनत्रय की अनिवार्यता पर एकांकीकारों में मतैक्य नहीं है । तथापि यह तो निश्चित है कि संकलनत्रय के ज़रिये हम कथावस्तु को भटकने नहीं देते, चंचल नहीं होने देते । मगर कथावस्तु को एक सीमित क्षेत्र में प्रभावकारी ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं । दूसरे शब्दों में संकलनत्रय कथावस्तु एवं एकांकीकार को अपने नियंत्रण में रखने का काम करता है ।

27.13.5. उद्देश्य

हर एकांकी एक निश्चित उद्देश्य से लिखा जाता है । मात्र मनोरंजन देना या कोरा उपदेश देना आज के एकांकीकारों का उद्देश्य नहीं है । आज के एकांकी समाज के सही प्रतिबिंब सिद्ध हुए हैं । मानव मस्तिष्क को चिंतन की सामग्री देना भी इन एकांकियों का लक्ष्य रहा है । एकांकीकार अपनी रचना के द्वारा व्यक्ति और समाज की समस्याओं पर प्रकाश डालने एवं उन्हें कलात्मक अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न करता है और तद्वारा अपना जीवन-दर्शन प्रस्तुत करता है । इस दौरान वह उपदेशक के रूप में नहीं, किंतु एक कलाकार के रूप में काम करता है । एकांकी के दर्शक जब घर लौटते हैं तो वह 'कुछ न कुछ' लेकर जाए, और उस पर चिंतन करने को उद्यत हो, तो समझना चाहिए कि वह एकांकी सफल हुआ है ।

27.13.6. भाषा-शैली

संवाद पात्रोचित होने चाहिए और इनकी भाषा पात्रोचित, प्रांजल और वातावरण के अनुकूल होनी चाहिए । एकांकी में अलंकृत एवं मुहावरेदार भाषा का प्रयोग अपेक्षणीय नहीं है । भाषा के प्रयोग में एकांकीकार को अत्यंत संयम के साथ काम लेना

पड़ता है । संक्षेप में, एकांकीकार को अत्यंत सजग रहना पड़ता है ।

27.13.7. शीर्षक

एकांकी का शीर्षक इस प्रकार सार्थक होना चाहिए कि उसे पढ़ते ही पाठक अथवा दर्शक के मन में उसकी वस्तु के प्रति न केवल आकर्षण उत्पन्न होना चाहिए अपितु उसे पढ़ने और देखने की चाव भी बनी रहनी चाहिए । एकांकी का नामकरण व्यक्ति, घटना अथवा भावना के आधार पर किया जाता है और कभी-कभी वह प्रतीकात्मक भी होता है और वह एकांकी की वस्तु की ओर निर्देश करता है ।

उपरोक्त तत्वों के अलावा एकांकी में रंग निर्देश और अभिनेयता का भी अपना महत्व है । क्योंकि एकांकी प्रमुख रूप से अभिनय के लिए ही लिखे जाते हैं । एकांकीकार अपनी कथावस्तु को सजिंदा बनाने का प्रयत्न करता है जोकि अभिनय के द्वारा ही संभव है । इसलिए लेखक निर्देशक के लिए कुछ रंग संकेत या निर्देश भी देता है जिनका पालन करने से उस एकांकी का योग्य वातावरण निर्मित होता है । (एकांकीकार द्वारा दिए गए रंगसंकेत यदि पर्याप्त न लगे तब एकांकी का निर्देशक अपनी ओर से यथोचित रंगनिर्माण करने में स्वतंत्र रहता है) भावाभिव्यंजना एवं अभिनय के लिए लेखक द्वारा दिए जानेवाले संकेतों से बड़ी सहायता मिलती है । एकांकीकार निर्देश देता है मगर इन निर्देशों को अमल में लाना वास्तव में एकांकी के निर्देशक का उत्तरदायित्व है । एकांकी की सफलता के लिए लेखक, निर्देशक और अभिनेताओं का सक्रिय सहयोग अनिवार्य है ।

एकांकी आधुनिक युग की माँग है । आज के एकांकी एक ओर मनोरंजन देने में सफल हुए हैं तो दूसरी ओर पाठक एवं दर्शकों के दिल और दिमाग को सोचने की समग्री देने में भी सफल हुए हैं । हमारे एकांकीकारों ने इस क्षेत्र में नए-नए प्रयोग

किए हैं । व्यक्ति और समाज की चारों ओर जो समस्याएँ हैं, उन्हें उभारकर रखने में, तद्वारा समाज का विश्लेषण करने में, आज के एकांकीकार निरंतर सक्रिय रहे हैं । हिन्दी एकांकी-विधा का इधर के वर्षों में अद्‌भुत विकास हुआ है ।

27.14. एकांकी के भेद

27.14.1. तकनीक या रचना-प्रकार के आधार पर

1. मोनो ड्रामा :

इसमें केवल एक पात्र स्वगत कथन के रूप में मानसिक परिस्थितियों के द्वन्द्व को स्पष्ट करता है ।

2. स्क्रिप्ट :

इसमें किसी विषय पर अनेक मित्रों के हास-परिहासपूर्ण वार्तालाप को ही नाटकीय रूप प्रदान कर कथा के रूप में संयोजित किया जाता है ।

3. फैन्टेसी :

इसकी कथा नितांत काल्पित और इस जगत् से दूर किसी कल्पना जगत् की होती है ।

4. रेडियो प्ले :

रेडियो प्ले में ध्वनि के उतार-चढ़ाव आदि की सहायता से रंगमंच का पूर्ण अभाव रहते हुए भी वातावरण की सृष्टि करके नाटक का अभिनय किया जाता है ।

5. फीचर :

इसमें रेडियो तकनीक के आधार पर किसी विषय से संबद्ध वार्तालाप द्वारा पर प्रकाश डाला जाता है ।

6. गीति-नाट्य :

इसमें संवाद पद्यात्मक होते हैं । यही इसकी विशेषता है ।

7. ओपेरा :

खुले रंगमंच पर खेले जाने वाले एकांकी को ओपेरा कहते हैं ।

8. डाँकी :

इनमें केवल एक संक्षिप्त दृश्य में तीनों इकाइयों का भिर्वाह करते हुए किसी उद्दीप्त क्षण को चित्रित किया जाता है ।

9. संवाद अथवा संभाषण :

इसके अंतर्गत दो पात्रों के कथोपकथन द्वारा किसी सिद्धांत का प्रतिपादन किया जाता है ।

27.14.2. मूल प्रवृत्तियों के आधार पर

मूल प्रवृत्तियों के आधार पर डॉ.सत्येन्द्र में एकांकी के आठ भेद स्वीकार किए हैं ।

1. आलोचक एकांकी : जो संसार के निवासियों की दुर्बलताओं की आलोचना कर उनकी ओर ध्यान आकर्षित करता है ।
2. विवेकवान एकांकी : इनमें वाद-विवाद द्वारा आलोचना प्रत्यालोचना की जाती है ।
3. समस्या एकांकी : इनमें विशिष्ट सामयिक समस्याओं पर प्रकाश डाला जाता है ।
4. अनुभूतिमय एकांकी
5. भावुक एकांकी
6. व्याख्या-मूलक एकांकी
7. आदर्शमूलक एकांकी
8. प्रगतिवादी एकांकी

27.14.3. विषय-वस्तु के आधार पर

विषय-वस्तु के आधार पर एकांकी के पाँच भेद स्वीकार किए गए हैं -

1. सामाजिक
2. ऐतिहासिक
3. राजनीतिक
4. पौराणिक
5. ऐतिहासिक

27.14.4. संदेश के आधार पर

एकांकियों में व्यंजित संदेश की दृष्टि से उनके चार भेद स्वीकार किए गए हैं -

1. आदर्शवादी 2. प्रकृतिवादी
3. यथार्थवादी 4. मनोरंजनवादी

27.14.5. अभिनेयता के आधार पर

अभिनेयता की दृष्टि से एकांकियों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है -

1. पठनीय एकांकी : इन्हें अनेक कारणों से रंगमंच पर अभीनीत नहीं किया जा सकता ।
2. रंगमंचीय एकांकी : इन्हें पढ़ने पर भी आनन्द प्राप्त होता है तथा रंगमंच पर इनका सफलतापूर्वक प्रदर्शन भी किया जा सकता है ।

27.14.6. अन्य

एकांकी का अन्य रूप भी आजकल उपलब्ध हो रहा है जिसे 'कौकनी' कहते हैं । इसमें मजदूरों द्वारा प्रयुक्त भाषा का प्रयोग किया जाता है ।

27.15. कहानी और एकाँकी में अंतर

एकांकी का कुछ साम्य कहानी दिखायी पड़ता है । दोनों के रूप कथात्मक हैं , दोनों के आकार संक्षिप्त होते हैं, और दोनों में कथानक, पात्र,संलाप आदि उपकरण समान रूप से आते हैं । कुछ आलोचकों को इन दोनों स्वरूप-विधानों में इतना साम्य ज्ञात होता है कि वे दोनों को एक ही मान लेते हैं । किंतु यदि इन दोनों विधाओं की विभिन्नताओं की ओर ध्यान दें तो अंतर भी स्पष्ट होगा । डॉ.रामकुमार वर्मा ने कहानी और एकांकी की पाँच

विभिन्नताओं का उल्लेख किया है, "कहानी और एकांकी में सर्वप्रथम भेद है ध्येय की भिन्नता । कहानी की रचना, वर्णन-वैचित्र्य को ध्यान में रखकर की जाती है । जबकि एकांकी रचना में आरंभ ही जिज्ञासा - जनक है । दूसरे, कहानी का निर्माण पढ़ने के लिए होता है, रंगमंच के लिए नहीं । जबकि एकांकी की रचना सर्वप्रथम नाटकीयता को ध्यान में रखकर की जाती है, तीसरे, कहानी लेखक लिखते समय केवल पाठकों का ध्यान रखता है । इसके विपरीत एकांकीकार रंगमंच अथवा दर्शक और पाठक दोनों वर्गों का ध्यान रखता है । चौथे, कहानी में लेखक का व्यक्तित्व अधिक रहता है और एकांकी में लेखक का व्यक्तित्व अप्रकट रहता है । पाँचवें, कहानी लेखक एक कहानी में घटना अथवा चरित्र-चित्रण में से केवल एक का ही ध्यान रखता है और एकांकी-लेखक चरित्र-चित्रण तथा घटनाओं का एक साथ ही ध्यान रखता है ।

इन विचारों से स्पष्ट होता है कि एकांकी मूलतः दृश्यत्व के कारण ही कहानी से भिन्न है । पर इसका अर्थ यह नहीं कि रंगमंच पर अभिनीति कोई भी कहानी एकांकी हो जायगी । दोनों में एक गहरा अंतर है उनकी मूलभूत चेतना का अंतर है ।

27.16. बोध प्रश्न

1. नाटक और एकाँकी में अंतर क्या है ? सविस्तार लिखिए ।
2. एकाँकी के तत्वों के बारे में एक लेख लिखिए ।
3. कहानी और एकाँकी के अंतर स्पष्ट कीजिए

NOTES

NOTES

इकाई अट्ठाईस -ए : स्ट्राइक - भुवनेश्वर

इकाई की रूपरेखा

28A.0. उद्देश्य

28A.1. प्रस्तावना

28A.2. लेखक परिचय

28A.3. कथानक

28A.4. चरित्र-चित्रण

28A.5. एकांकी की प्रतीकात्मकता

28A.6. एकांकी में अभिव्यक्त व्यंग्य

28A.7. भाषा - शैली

28A.8. संवाद

28A.9. रंग संकेत

28A.10. उद्देश्य

28A.11. बोध प्रश्न

28A.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने एकाँकी क्या है ?, एकाँकी कला तथा एकाँकी के भेद आदि के बारे में सविस्तार अध्ययन किया ।

28A.1. प्रस्तावना

इस इकाई में श्री भुवनेश्वर कृत 'स्ट्राइक' एकाँकी के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं । यह एक सामाजिक एकाँकी है । इसएकाँकी के माध्यम से एकाँकीकार ने सम-सामायिक जीवन की विकृतियों पर कठोर आघ्रांत किया है ।

28A.2. लेखक परिचय

इब्सन, शाँ और गाँल्सवर्दी से गहराई तक प्रभावित एकांकीकार भुवनेदश्वर की श्रेष्ठता इसी बात से विदित हो जाती है कि उन्हें अश्क जैसे एकांकीकार असाधारण प्रतिभा का धनी माना है । स्वाभाविकता, उग्रता, प्रखरता, तीखापन, स्पष्टवादिता, वाग्वैदग्ध्य, व्यंग्य, प्रश्नाकुलता, मनोवैज्ञानिक जिज्ञासा और औधोगीकरण से उत्पन्न विविध समस्याओं का सटीक अंकन उनके एकांकियों की विशेषताएँ हैं । भुवनेश्वर के पदार्पण से पहले हिन्दी एकांकी परंपरावादी मान्यता और ऐतिहासिक आदर्शवादिता की सीमाओं में घुसकर किसी प्रकार जीवन रक्षा कर रहा था । भुवनेश्वर ने उसे यथार्थ की भूमि पर प्रतिष्ठित करके नया जीवन दिया । पूँजीवादी समाज व्यवस्था के दबाव से उत्पन्न विविध समस्याओं को मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर प्रस्तुत करके उन्होंने नए क्षेत्रों का उद्घाटन किया कथ्य के क्षेत्र में ही नहीं उन्होंने शिल्प, भाषा और अभिव्यंजना कौशल के क्षेत्रों में भी नवीन भूमि जोड़ी तथा हिंदी एकांकी को उच्च भूमिका पर पहुँचा दिया । पात्रों के चित्रण और रंगमंच संकेतों में भी उन्होंने तीखे व्यंग्य और वक्रोक्तियों का आश्रय लिया । उनके अनोखे रंग संकेतों के कारण तथा उपर्युक्त विशेषताओं के कारण थोड़े से एकांकी लिखने वाले

इस कलाकार ने 'एकांकीकार का राजकुमार' का पद अर्जित कर लिया ।

28A.3. कथानक

एक पुरुष (श्रीचन्द) ने एक आधुनिका से दूसरा विवाह किया है । पुरुष जहाँ उच्च वर्गीय मान्यताओं को स्वीकार करके चलने वाला है वहाँ स्त्री भी स्वतंत्र प्रकृति की है । पुरुष द्वारा प्रदत्त स्वच्छन्दता का भरपूर उपयोग करती है । पुरुष और स्त्री की विचारधारा एक दूसरे से भिन्न है । दोनों के संबंध औपचारिक हैं आत्मिक नहीं । पुरुष एक व्यक्ति को निमंत्रित करता है और उसे लेकर अपने घर आ जाता है । उनके मध्य कई सारी बातें होती हैं । स्त्री अपनी सहेलियों के साथ लखउनऊ गई है और पति से शाम को साढ़े दस की गाड़ी से लौट आने को कह गई है । घर आने पर पुरुष को ज्ञात होता है कि स्त्री आज रात लखनऊ में ही रहेगी, वापस नहीं आएगी । पुरुष का मित्र कहता है, "आईए मेरे होटल में आइए, आपकी फैक्ट्री में तो आज स्ट्राटक हो गई है ।" और एकांकी समाप्त हो जाता है ।

स्ट्राइक में कथानक अत्यंत संक्षिप्त गंभीर उद्देश्योन्मुख तथा व्यंग्य से प्रेरित है । औद्योगीकरण ने व्यक्तिसत्ता को समाज और विशेषता परिवार सत्ता के ऊपर आरोपित कर दिया है । नारी भी अपने अधिकार के प्रति सक्रिय और जागरुक हो उठी है । पुरुष और स्त्री दोनों समान अधिकार को भोगते हैं । दोनों में से कोई भी दूसरे के अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता । परंपरागत नारी के समान आज की स्त्री पति और परिवार के लिए नहीं जीती, वरन् वह अपने लिए जीना चाहती है । पुरुष अपनी स्त्री से अधिक से अधिक सहानुभूति की आशा कर सकता है । कभी-कभी इस सहानुभूति के लिए भी स्ट्राइक हो जाती है । पुरुष और स्त्री के मार्ग भिन्न-भिन्न दिशाओं की ओर जाते हैं । इस परंपरागत विचारधारा को नहीं स्वीकार किया जा सकता कि स्त्री का

कार्यक्षेत्र घर की चहारदीवारी है । एकांकीकार नारी मुक्ति का हिमायती है और चाहता है कि भोजन की समस्या के निराकरण के लिए स्त्री को चूल्हे-चक्की तक सीमित कर देना अनुचित है । भुवनेश्वर ने इस एकांकी के कथानक में प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग किया है । शीर्षक प्रतीकात्मक है । इस शब्द का संबंध औद्योगिक क्षेत्र से है । एकांकीकार की धारणा है कि हमारा गृहस्थ भी औद्योगिक क्षेत्र की तरह अनेक प्रकार की प्रतिद्वन्द्विताओं और संघर्षों के दौर से गुजर रहा है । पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक न होकर प्रतिद्वन्द्वी बनकर आमने-सामने खड़े हो जाते हैं । दोनों अपने-अपने अधिकारों की रक्षा के लिए जूझते हैं और दूसरे को किसी न किसी तरह नीचा दिखाने पर तुल जाते हैं । परिवार की असफलता, कुंठा और असहमति के मूल में कहीं न कहीं थोथें मूल्यों और पाश्चात्य जीवन-पद्धति का अंधानुकरण है । भुवनेश्वर यह मानकर चलते हैं कि प्रतीकों द्वारा उन सत्यों को उनकी संश्लिष्टता में उद्‌घाटित किया जा सकता है जिनकी अभिव्यक्ति अन्य माध्यमों से संभव नहीं है । भुवनेश्वर का यह मानना है कि प्रतीकों द्वारा अन्य सत्यों को उनकी संश्लिष्टता में उद्‌घाटित किया जा सकता है जिनकी अभिव्यक्ति अन्य माध्यमों से संभव नहीं है ।

स्ट्राइक का कथानक मध्यवर्गीय समाज की उन विषमताओं को सामने लाता है तो उच्च शिक्षा वर्ग में प्रविष्ट होकर पारिवारिक संबंधों की ऊष्मा को सीखती जा रही है । बुद्धिवाद व्यक्ति को भावनाशून्य बना देगा यह खतरा चाहे आगे की बात है, लेकिन आज की व्यावसायिकता और उसमें उत्पन्न व्यस्तता पति-पत्नियों को न केवल पारिवारिक उत्तरदायित्वों के प्रति उदासीन बना रही है, वरन् वे एक दूसरे से कटते चले जा रहे हैं, । अपने लिए एक निजी खोल रच लेते हैं और परिवार की सीमाओं में प्रविष्ट होते ही उसे ओढ़ लेते हैं । पति-पत्नी के बीच चलने वाले परम रम्य व्यापार भी उन्हें इस खोल से बाहर नहीं खींच पाते और परिणाम यह होता है कि सेक्स-व्यापार एवं वात्सल्य आदि भावों की अभिव्यक्ति भी औपचारिकता बन जाती है ।

इस प्रकार भुवनेश्वर समसामयिक जीवन पर कठोर आघात करते हैं । उनके आघातों में व्यंग्य है, और व्यंग्य बहुत तीखा भी है ।

28A.4. चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में पुरुष पात्र ही अधिक मुखर है । अतः कथानक उसी के कारण गतिशील होता है । अतः इस एकांकी का नायक भी पुरुष है ।

स्ट्राइक के प्रारंभिक दृश्य में हमें स्त्री और पुरुष चाय पीते दीखते हैं, लेकिन बातचीत एकदम बंद है और यह स्थिति दस मिनट तक चलती है । इस दौरान उनका आपसी वार्तालाप बंद है, क्योंकि दोनों अपने-अपने खोलों में प्रविष्ट हो गए हैं । जब चाय खतम होती है तब स्त्री अपने खोल से बाहर आती है और पुरुष को कोंच कर खोल से बाहर निकालने की कोशिश करती है । हूँ-हाँ के बाद पुरुष भी बाहर आ जाता है । दोनों बतियाने लगते हैं । बातचीत के दौरान पुरुष अधिक मुखक हो उठता है और सामाजिक विकृतियों की बखिया उधेड़ने लगता है । बहुमत के नाम पर किस प्रकार एक व्यक्ति शासन सूत्र अपने हाथ में संभावल लेता है, उच्च वर्ग के लोग किस प्रकार मरते-गिरते से आगे बढ़कर मौत की अंधेरी घाटी की ओर मुँह बाए दौडे चले जा रहे है, अभिजात वर्ग ऊपरी टीम-टाम कितनी ही रखे, लेकिन कपड़ों के नीचे सब धुड़मुँहे हैं, उद्योगपति वर्ग स्ट्राइक की धमकी से बौखला जाता है आदि अनेक बातें नायक द्वारा उठाई जाती हैं । यहाँ नायक संभवतः यह दिखाना चाहता है कि वह स्ट्राइक की धमकी से घबराने वाला नहीं है, वह चाहे कालेज के लड़कों की ओर से आए, चाहे मज़दूरों की ओर से और चाहे पत्नी की ओर से ।

अब बारी स्त्री की आती है । वह सूचना देती है - "मैं तो जा रही हूँ .... (बाहर की तरफ रुमाल हिलाते हुए) .... वहाँ ! " यह बाहर जाना सामान्य बाहर जाना भी है (वह लखनऊ जाने

वाली है) और पारिवारिक रुढ़ियों से बाहर जाना भी संभवतः वह बाहर जाने के बहाने अपनी गतानुगतिकता से ही बाहर जाने की कोशिश में है । पुरुष उसे भांपता है । आखिर वह भी दुनिया देखे बैठा है । उसकी पहली औरत मर चुकी है । उसके दो बच्चे हैं । लड़की मोनी बी.ए. कर चुकी है । बाहर पढ़ती है । लड़का भी बाहर ही है और छुट्टियों में इनसे मिलने आता रहता है । पुरुष ने अंगेजी लेखकों को पढ़ा है और पूँजीवादी समाज व्यवस्था का कायल बन चुका है । वह मशीन की तरह उचित समय पर उचित काम करने का हिमायती है । उसकी धारणा है कि दुनिया में तीन चीजें मुख्य है - दौलत, आराम और यश, और ये तीनों उसे मिलती है जो मशीन की तरह अपना काम पूरा करता है । इससे प्रकट है कि यांत्रिकता उसकी जहनियत बन चुकी है । वह हर परिस्थिति और हर व्यक्ति को अपने माफिल बनाने का प्रयास करता है और अगर नहीं बना पाता तो स्वयं को उसके अनुरूप ढाल लेता है । वह जानता है कि लोग जो कुछ कहते हैं वह सच नहीं होता । हर बात के भीतर एक और अर्थ रहता है । वह स्त्री से लखनऊ जाने का रहस्य पूछता है लेकिन कोई बात हाथ नहीं लगती । वह स्त्री की ईर्ष्या को उत्तेजित करके उसे कमजोर बनाने की कोशिश करता है और इस कमी को उसमें लक्षित करके अपने को संतोष देना चाहता है । पर स्त्री इस सबसे अप्रभावित रहती है ।

पुरुष का चरित्र पुरुष पात्रों के बीच भिन्न आयाम ग्रहण करता है । वलब में वह अनुभवी अद्योगपति और दार्शनिक है, जिसने जीवन को बहुत गहराई से समझा है, वह कहता है, और भाई क्या जीत, क्या हार ? ..... हम तो ईमानदारी से जीना चाहते हैं । फिर कहता हूँ, जीवन एक कला है, और सबसे बडी कला द्य पुरुष अपने जीवन की निरर्थकता को बड़ी खूबी से दबाता है । वह अपने युवक मित्र से बात करते समय गृहस्थ की निरर्थकता का उत्तरदायित्व नौकर पर पटक कर स्वयं को बचा जाता है । उसे नौकर का छुट्टी लेना अच्छा नहीं लगता । लेकिन उसकी पत्नी को भी छुट्टी चाहिए और लखनऊ में छुट्टियाँ मना

रही है, इस प्रसंग को उठने नहीं देता और इस प्रसंग पर मौन धारण करता है ।

पुरुष विवाह को आवश्यक मानता है, कारण शादी के बिना हम दुनिया के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं कर सकते । उसके अनुसार स्त्री और पुरुष समाज रूंपी मशीन के दो पुर्जे हैं । उसके ये विचार यांत्रिक विकास की देन है । जिन्हें पूँजीवादी समर्थन प्राप्त है । वह एडजस्टमेंट को गृहस्थ मानता है न समर्पण को । वह अपनी दोनों सित्रयों की तुलना करता है । पहली को भारतीयता का प्रतीक मानकर उसकी उपेक्षा करता है और दूसरी को आधुनिका बताकर काम्य घोषित करता है । इस तुलना के बीच बच्चे भी आ जाते हैं जो प्रथम पत्नी के है । वर्तमान पत्नी से उसका समझौता है कि बच्चों के कारण पति-पत्नी की स्वच्छन्दता खतरे में पड़ जाती है और वे निजी व्यक्तित्व का विकास नहीं कर पातें, अतः इन्हें बच्चे पैदा नहीं करने है । अपने वर्तमान ग्रहस्थ जीवन से वह पूर्ण संतुष्ट होने की बात कहता है, क्योंकि इसमें सस्ती भावुकता का स्थान बौद्धिक समझदारी है तो वह भूल होगी ।

पुरुष अपनी यांत्रिकता की झौंक में सुख और दुख के लिए भी फार्मूला बना चुका है । कुछ स्थितियों को उसने इन वर्गों में विभाजित कर लिया है, तभी तो वह कहता है कि, ''दुःख या सुख इतनी ठोस चीजें हैं कि एक दिन तुम देखोगी कि यह शीशियों में बिका करेंगी ।

पहले वह वकील था अब वकालत छोड़कर उद्योगपति बन गया है । दुनियावी सफलता ने उसे अतिरिक्त उत्साही और दुनिया को अपने हिसाब से चलाने वाला बना दिया है । निरंतर आगे बढ़ते रहने के उत्साह में वह बहुत हिसाबी और अतिरिक्त बौद्धिक बनने को विवश है । यह उसकी नहीं उसके वर्ग के सभी लोगों की अनिवार्य नियति है ।

डॉ.मक्खनलाल शर्मा ने संक्षेप में श्रीचंद (पुरुष) के चरित्र पर यह अभिमत प्रकट किया है, "श्रीचंद नव उद्योगपति वर्ग का प्रतिनिधि है । जिसकी औद्योगिक स्पर्द्धा उसकी हार्दिकता को सोख गई है । वह टिसुए बहाने वालों को ही नफरत नहीं करता वरन् प्रेम करने वाली मरहूम पत्नी को भी धिक्कार भाव से याद करता है । ..... उसकी अपनी मौजूदा पत्नी से प्रतिद्वन्द्विता चल रही हैं, क्योंकि वह अपने घर और गृहस्थ को फैक्टरी का रूप दे चुका है, जिसके अंतर्गत रहता हुआ वह एक पुर्जा भर बन कर रह गया है । उसने पत्नी को पूर्जे से अधिक कुछ नहीं समझा है, अतः उसकी दृष्टि पुर्जों के संतुलन और समझौते पर बनी रहती है । निर्जीव पुर्जों का हर्दिकता से क्या वास्ता ? क्या पत्नी के साथ हफ्ते में एक बार सिनेमा चला जाना प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त नहीं है । जब ये पुर्जे स्ट्राइक कर देते हैं तो घर को होटल में ही शरण मिल सकती है । पाश्चात्य जीवन दर्शन से प्रथावित पारिवारिक व्यवस्था पर यह तीव्रतम व्यंग्य है । यदि परिवार के पुर्जों में तालमेल होना संभव न रहे तो क्या होना चाहिए ? श्रीचंद के पास पहिले से विकल्प तैयार है तो पुर्जा बदल डालिए, स्वयं बदल जाइए । क्योंकि आप खुद भी तो एक पुर्जे भर ही है ।

28A.5. एकांकी की प्रतीकात्मकता

यह एकांकी अनेक प्रतीकों के माध्यम से अपनी व्यंजना प्रस्तुत करता है । ये प्रतीक अनेक क्षेत्रों से ग्रहण किए गए हैं । सर्वाधिक प्रतीक औद्योगिक क्षेत्र से लिए गए हैं । इनमें स्ट्राइक, मशीन, पुर्जे, फैक्ट्री, दूकान, जी.आई.पी.ई.आई.आर.कार, पेट्रोल, पंप आदि प्रमुख है । अन्य क्षेत्रों से गृहीत प्रतीकों में सोने की चेन की घडी, ब्रिज का खेल, झवरा कुत्ता, खाना मकान, होटल आदि हैं । ये प्रतीक बार-बार इस तथ्य को सामने लाते हैं कि औद्योगिक क्रांति ने पूँजीवाद के साथ मिलकर परिवारिक संघर्षों को बना दिया है । हमारा नागरिक उच्च वर्ग की इन बुराइयों से बुरी तरह आक्रांत है । वे यथार्थ स्थिति को बेरहमी के साथ पेश करना

आवश्यक मानते हैं । समस्याओं को वे आध्यात्मिक संघर्ष कहते हैं और इसके लिए प्रतीकों का प्रयोग अनिवार्य ही नहीं अविकल्पनीय मानते हैं । समस्याओं को वे बेरहमी के साथ प्रस्तुत करते हैं । उनकी दृष्टि से 'जनता यथार्थवाद से चिढ़ती नहीं, वरन् भय खाती है । यथार्थ और आदर्श के भेद को वे पाठकगत मानते है, लेखकगत नहीं ।

स्ट्राइक में लेखक परिवार में रहते पति-पत्नी के जिनी संबंधों की अपेक्षा उनके बाहय और सामाजिक संबंधों को ही उभारने का प्रयास करता है । संपूर्ण विश्लेषण और आकलन एक गहरी तटस्थता के झीने आवरण में लिपटा हुआ है । वे मानते हैं कि वैज्ञानिक युग में यांत्रिक क्रांति आवश्यंभावी है और उससे उत्पन्न होने वाली परिस्थितियों से कोई व्यक्ति बन नहीं सकता । उनके लिए बचने का अर्थ पिछड जाना या मूल धारा से कट जाना है । अतः वे धारा के भीतर प्रवेश कर अपने लिए मार्ग खोजने के पक्षपाती है । इस मार्ग शोधन में जो कठिनाइयाँ आती हैं उनको लेकर वे अपना विश्लेषण आकलन प्रस्तुत करते है । प्रतीक उनके लिए शिल्प की अनिवार्यता है ।

28A.6. एकांकी में अभिव्यक्त व्यंग्य

स्ट्राइक व्यंग्यमूलक एकांकी है । इसमें अनेक स्थितियों, दशाओं तथा व्यक्ति संबंधों पर तीखा प्रकाश फेंका गया है । व्यंग्य का अनिवार्य अंग अतिशयोक्ति होती है, क्योंकि एकांकीकार जिस वैज्ञानिक या सामाजिक हीनता को व्यंग्य का आधार बनाता है, उसे सामान्य की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप में चित्रित करता है, यदि वह उस हीनता को अतिरंजित रूप से न दिखाए तो व्यंग्य का औचित्य सिद्ध नहीं हो सकेगा । इस एकांकी में यदि श्रीचंद और उसकी पत्नी के बीच के संबंध इतने औपचारिक औ: यांत्रिक न दिखाए जाते तो घर को फैक्ट्री और फैक्ट्री में स्ट्राइक हो जाने की बात अपना मार्मिक प्रभाव न डाल पाते । दोनों के बीच के संबंधों

को अथ से इति तक अनेक रूपों एवं स्थितियों में डालकर पेश किया गया है । अन्य पात्रों एवं स्थितियों से तुलना की गई है । एवं स्थान-स्थान पर फैक्ट्री, यंत्र, पुर्जा, मशीन, मिलखीराम का पैट्रोल पंप आदि प्रतीकों द्वारा व्यंग्य को उभारा गया है और अंत में स्ट्राइक का औचित्य सिद्ध किया गया है । घर बंद है, चाबी का पता नहीं किस पर है, पति आमंत्रित अतिथि के साथ बाहर बरामदे में प्रतीक्षा कर रहा है, पत्नी दूसरे शहर में सहेलियों के साथ आमोद प्रमोद में संलग्न है, नौकर छुट्टी पर है, खाने का कोई ठिकाना नहीं है और कार मिलखीराम के पेट्रोल पंप पर खड़ी है । अपनी कही जाने वाली कोई वस्तु भी श्रीचंद के पास नहीं रह गई है । होटल की शरण ग्रहण करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं । जब परिवार फैक्ट्री और पति-पत्नी पुर्जे बन जाते हैं तो ऐसा ही होता है ।

एकांकी के अंत में जब चपरासी सूचना देने आता है कि मेमसाहब आज रात लखनऊ रहेंगी और कल वापस आएँगी तो वह श्रीचंद के कुत्ते को देखता है और कह उठता है, "हुजूर, आपका कुत्ता बड़ा पानीदार है । अंग्रेजी है ।" चपरासी जिस वर्ग का है उसमें स्त्री-पुरुष संबंध उच्चवर्ग की अपेक्षा अधिक मानवीय है । वह मन में उच्च वर्ग के स्त्री-पुरुषों को कुत्तों से भी बदतर समझता है । उसकी धारणा है कि इनमें आत्मसम्मान नहीं रह गया है । जबकि इनके कुत्ते पानीदार है । कम से कम इन्हें कुत्तों से तो सकब सीखना चाहिए था ।

28A.7. भाषा-शैली

प्रस्तुत एकांकी की भाषा जितनी व्यंजनापूर्ण है उतनी ही सशक्त । युन-चुन कर शब्दों का प्रयोग किया गया है । यहाँ तक कि रंगमंच - संकेतों की भाषा भी लाघवपूर्ण और लाक्षणिक है । वाक्य रचना व्यावहारिक तथा आवश्यकतानुसार है । एक शब्द भी न फालतू है न अभिप्रायहीन । डॉ.मक्खनलाल शर्मा ने भुवनेश्वर

को 'शब्दों का जादूगर' कहा है और माना है कि दे 'पात्रानुकूल भाषा लिखने में पूर्ण कुशल है । आज पढ़े-लिखें लोगों की भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अनिवार्य रहता है, अतः भुवनेश्वर की भाषा को, जिसमें अंग्रेजी और उर्दू की शब्दावली रहती है, अव्यावहारिक नहीं कहा जा सकता । आवश्यकतानुसार वे नए शब्द गढ़ लेने की कलजा में भी माहिर है । भुवनेश्वर सामान्यतः उन्हीं अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते हैं जिनके पर्यायवाची आसानी से नहीं मिलते या जो हिन्दी भाषियों में इतने प्रचलित हो चुके हैं कि उनका व्यवहार सामान्य बात हो गई है । विशिष्ट व्यंजनार्थ कतिपय चुने हुए शब्दों का प्रयोग उनके एकांकियों की विशेषता है ।

भुवनेश्वर की भाषा प्रवाहमयी, सजीव और भावानुगामिनी होती है । यदि पात्र जोश में है और अपनी बात को प्रभावशाली ढ़ंग से प्रस्तुत करके दूसरों से समर्थन कराने का प्रयास कर रहा है तो भाषा में व्यंग्य के साथ-साथ अनेक मुहावरों की झड़ी लग जायेगी । जैसे कपड़ों के नीचे यह सब इज्जतदार मोटे धुडमुँहे, गदहे हैं । 'हाथ-पाव फूल गये ।' आदि भुवनेश्वर द्वारा प्रयुक्त शब्द अधिक सशक्त और पात्र की सामाजिक भूमिका तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को व्यंजित करनेवाले हैं ।

28A.8. संवाद

इस एकांकी में सबसे प्रभावशाली तत्व संवाद है, जो न केवल पात्रों को प्रकाशित करते और घटनाओं को आगे ले जाते हैं, वरन् एकांकी के उद्देश्य के महत्वपूर्ण वाहक भी हैं । सभी पात्र अपने संवादों में जीवित हैं, जहाँ वे अपने व्यक्तित्व को दूसरों से पृथक करके प्रस्तुत करते हैं । सभी पात्रों का वर्ग एवं सामाजिक स्तर समान है, अतः उनके संवादों की भाषा में बहुत अंतर नहीं है । पात्रों की मान्यताओं, संस्कारों और अनुभवशीलता के आधार पर सूक्ष्म सा अंतर अवश्य दृष्टिगोचर होता है, जिसे सामान्य दर्शक नहीं समझ सकता । संवादों में चुस्ती, हाजिर जवाबी और एक तीखा व्यंग्य परिव्याप्त है । द्रष्टव्य है -

पुरुष : तुम्हें मेरे सर की कसम, बतला दो लखनऊ में क्या है ?
स्त्री : (बरबस मुस्कुराती हुई) लखनऊ में । .... बहुत सी चीलें .... छोटा - बड़ा इमामबाड़ा चिडियाघर, हजरतगंज, अमीन ।
पुरुष : नहीं, मैं पूछता हूँ । आज शाम को कोई खास बात ?
स्त्री : (जाते हुए) आज शाम को खास बात ? कोई खास बात नहीं है ।

कुछ संवाद ऐसे भी हैं जहाँ व्यक्ति सत्य के माध्यम से सामान्य सत्य की ओर इंगित किया गया है और वह भी प्रतीकात्मक भाषा में । प्रतीक भी बाहर से नहीं लिए गए हैं, वे परिवेश और संदर्भ से उठा लिए गए हैं ।

28A.9. रंग संकेत

प्रभावान्विति की दृष्टि से भुवनेश्वर के एकांकी अपना विशेष स्थान रखते हैं । इस एकांकी में त्वरामूलक संकेतात्मकता के दर्शन प्रारंभ से ही होने लगते हैं । एकांकी के प्रारंभिक रंग-संकेतों में बताया गया है - 'पुरुष सुपुरुष ! स्त्री, कुछ बोले तो पता चले कम से कम दस मिनट से खामोश तीसरे प्रहर की चाय पी रही है । एकांकी के उद्देश्य का आभास मिलने लगता है कि इन पति-पत्नी में आंतरिक एकता का अभाव है । इसी प्रकार के अनेक संकेत बीच-बीच में मिलते चलते हैं और इस प्रकार एकांकी क्रमशः उस प्रभाव को गहराता है चलता है जिसकी पूर्णाहुति अंत के साथ होती है । दूसरे दृश्य के कुछ अंश को छोड़कर तीव्रता की कमी नहीं है । लगता है जैसे पहाड़ी नदी की तरह एकांकी अपने उद्देश्य की ओर दौडता चला जा रहा है । स्थल संकलन की दृष्टि से इसमें तीन दृश्य है । प्रथम और तृतीय दृश्य को एक ही स्थल पर आयोज़ित किए गए हैं, किंतु द्वितीय दृश्य क्लब में है । इस प्रकार जल्दी-जल्दी सैट बदलने में अभिनय के आयोजकों को असुविधा का अनुभव होता है । अतः रंगमंच पर खेलने में इसे सफलता मिलेगी या नहीं इस पर संदेह है ।

28A.10. उद्देश्य

भुवनेश्वर ने समसामयिक जीवन की विकृतियों पर कठोर आघात किए है । उनके आघातों में जितनी निर्ममता है उतनी ही व्यंग्यात्मकता । व्यंग्य में तीखापन उनकी अपनी विशेषता है, जो उन्हें जीवन से प्राप्त हुआ है । डॉ.नगेन्द्र के अनुसार, ''जीवन की किसी भी वस्तु में उन्हें आस्था नहीं । इस निरास्था की जननी ज्ञान-जन्य विरक्ति नहीं है, इर्ष्या और जलन है - असफलता की कूढ़न है । इसलिए उनके हृदय में जीवन के प्रति उपेक्षा या तिरस्कार (करुणा तो संभव ही कहाँ) की भावना नहीं है - उसमें तो व्यंग्य और विष है - बटलस का सा, कबीर का सा नहीं ।''

28A.11. बोध प्रश्न

1. ''स्ट्राइक'' सामाजिक एकाँकी में एकाँकीकार समाज को क्या बताना चाहता है - स्पष्ट कीजिए ।

NOTES

इकाई अट्ठाईस -बी : एक दिन - श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र

इकाई की रूपरेखा

28B.0. उद्देश्य

28B.1. प्रस्तावना

28B.2. लेखक परिचय

28B.3. कथानक

28B.4. कथानक की समीक्षा

28B.5. शीर्षक की सार्थकता

28B.6. पात्र / चरित्र-चित्रण

- 28B.6.1. शीला
- 28B.6.2. राजनाथ
- 28B.6.3. निरंजन

28B.7. संवाद

28B.8. प्रतीकात्मकता

28B.9. भाषा-शैली

28B.10. उद्देश्य

28B.11. बोध प्रश्न

28B.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने एकाँकी के उद्‌भव और विकास के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं । नाटक, कहानी और एकाँकी के अंतर भी जान लीं ।

28B.1. प्रस्तावना

इस इकाई में अब आप लक्ष्मीनारायण मिश्र के 'एक दिन' एकाँकी के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं ।

28B.2. लेखक परिचय

पंडित लक्ष्मी नारायण मिश्र आधुनिक हिन्दी नाटक के जनक कहे जा सकते हैं । आपको लिखने का शौक बचपन से ही था । इन्दर में पढ़ते समय आपने पहला नाटक 'अशोक' लिखा ।

लक्ष्मी नारायण मिश्र इब्सन के समस्या नाटकों से बड़े प्रभावित थे । अतः 'डाल्ज हाऊस', 'पिलर्ज ऑफ दि सोसाइटी' का हिन्दी अनुसाद किया । मिश्र जी इब्सन से प्रभावित होकर भी भारत और उसकी प्राचीन संस्कृति के प्रेमी है । राष्ट्र, जाति और व्यक्ति के अहम् में इनका अटल विश्वास है । नारी को भारत में वे फिर सीता और सावित्री के रूप में देखना चाहते हैं । जब वह चुनी न जाकर चुनती भी, वरी न जाकर वरती थी । मिश्र जी ने समस्या प्रधान एकांकी नाटक लिखने में विशेष रूप से ख्यातनाम है ।

सन्यासी, सिन्दुर की होली आपके महत्वपूर्ण समस्या नाटक हैं । आपको 'नारद की वीणा' पर उत्तर-प्रदेश सरकार से सम्मानित किया गया ।

28B.3. कथानक

मिश्रजी ने समस्या प्रधान एकांकी नाटक लिखे हैं । उसके लिए वे इतिहास और पुराण को अपना आधार बनाते हैं तथा

वर्तमान काल को भी अस्वीकार नहीं करते । इतिहास और पुराण का प्रयोग उन्होंने इस कौशल के साथ किया है कि आधुनिक युग की समस्याएँ उनके साथ अनुस्युत हो गई है । उनके एकांकी सामाजिक समस्याओं को लेकर लिखे गए हैं और ये समस्याएँ उन प्रतिनिधि पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत हुई है जिनमें वर्गगत और निजी विशेषताएँ अपनी चरम सीमा तक विकसित रही हैं । लक्ष्मीनारायण मिश्र ने जिन वर्तमान समस्याओं को आधार बना कर एकांकी लिखे हैं उनमें 'एक दिन' भी आता है ।

'एक दिन' की मूल संवेदना आधुनिक भारतीय नारी की गरिमा की पुनर्स्थापना है । आज का भारतीय समाज जिन पाश्चात्य जीवन-मूल्यों के पीछे पागल है और बिना समझे-बुझे उनका अंधानुकरण कर रहा है, उन्हें भारतीय जीवन पद्धति और आदर्श के संदर्भ में रखकर देखने और व्यवहार में लाने का प्रश्न उपस्थित किया गया है । इस एकांकी में दो आदर्शों की टकराहट है । भारतीय आदर्श के प्रतीक हैं राजनाथ और उनकी बेटी शीला । पाश्चात्य आदर्श का अनुगमन कर रहे हैं मोहन और निरंजन । रामनाथ के पूर्वज सौ साल पहले राजा थे । आज की स्थिति भिन्न है । राजनाथ पिछले दिनों को याद करता है और कहता है कि बाप दादाओं का घर चला गया, सारी संपत्ति चली गयी और पिछले दिनों की मान-मर्यादा और शान-शौकत भी नहीं रही, लेकिन हमने अपने आत्मसम्मान और भारतीय जीवन-मूल्यों को क्या कर रखा है ।

मोहन अपने पिता से कहता है, निरंजन एक.ए. पढ़ रहा है, धनी बाप का बेटा है और वह बहिन शीला को देखने आया है । निरंजन गर्मियों में नैनिताल रहता है, लेकिन अपने मिश्र के आग्रह पर झुलसाने वाली लू को वर्दाश्त कर उसके गाँव आया है । मोहन निरंजन का आभारी है कि उसने मोहन की प्रार्थना स्वीकार कर उसके साथ गाँव आना स्वीकार किया है । निरंजन पाश्चात्य विचार-धारा और जीवन-दर्शन से प्रभावित है । वह मानता और

चाहता है कि विवाह से पहले अपनी भावी जीवन संगिनी को देख सुन और समझ ले जिससे विवाहित जीवन अधिक सफल सुखी और सम्पन्न बन सके । वह चाहता है कि शिला बेझिझक उसके सामने आये । साथ उठे-बैठे और जो कुछ भी निरंजन जानना चाहे उस संबंध में अपनी प्रतिक्रिया स्पष्ट रूप से प्रकट करे, जिससे निरंजन उसके संबंध में अपनी स्पष्ट राय बना सके ।

शीला सत्रह वर्ष की सुन्दर सुशील और भारतीय आदर्शों में पली ग्रामीण बाला है । वह भारतीय आदर्श और जानकी के चरित्र से प्रभावित ही नहीं है, वरन् उन्हें समस्त भारत की नारी का आदर्श बनाने के लिए आवश्यक मानती है । अतः वह निरंजन घुल-मिल जाने को तैयार नहीं है । शीला का यह व्यवहार निरंजन को अखरता है । उसे लगता है जैसे उसका अपमान किया जा रहा है । मोहन के सामने वह अपनी नाराज़गी प्रकट करता है । परिणाम स्वरूप मोहन शीला को डाँटता है । शीला दुखी होती है । मोहन भी निरंजन से सारी बाते कह देता है, और निरंजन वापस जाने को तैयार होता है ।

इस पूरी घटना पर राजनाथ अपनी नाराजगी मोहन पर जाहिर कर देते हैं । मोहन पिता को समझाता है कि झूठी मर्यादा के चक्कर में पड़ना व्यर्थ है । यदि निरंजन शीला से एकांत में बात करना चाहता है, तो उसे अनुमति दे देनी चाहिए । अगर शीला उसे पसंद आ जाय तो बहुत बड़ी समस्था सुलझ जायेगी । पर राजनाथ अपनी कुलीन मर्यादा, और वंश परंपरा पर अड़िग विश्वास रखता है, इसलिए मोहन के प्रस्ताव का विरोध करता है । मोहन इन सबका विरोध करता हुआ आधुनिक तर्क प्रस्तुत करता है । अपने तर्क में वह प्राचीन काल के स्वयंवर की प्रथा का उदाहरण देता है और राजनाथ स्वयंवर का सही अर्थ उसे समझाता है । वह कहते हैं कि "लड़कियों का स्वयंवर होता था, पर चुनाव करने का अधिकार वर का न होकर कन्या का होता था ।" ..... उस युग में कन्या की जो मर्यादा थी उसका लोप हो

गया है । राजनाथ यह भी कहते हैं "तुम मुझे भयभीत करके अपनी हर उचित - अनुचित बात नहीं मनवा सकते ।" मोहन का अपने पिता से यही कहना है कि "आप अपने आदर्शों के सपनों में इस तरह डूबे हुए हैं कि वस्तु स्थिति से आँख मूंदकर उसकी उचित बातों को भी नहीं मानना चाहते ।"

राजनाथ और मोहन के बीच इसी प्रकार तर्क चलता रहता है और अखिर मोहन पिता से कहता है कि विचार सामंती युग के हैं, आप अपनी लड़की का सुख नहीं देखते ।" इसलिए वह अब निरंजन को स्टेशन पहुँचा आने को तैयार होता है । पर राजनाथ मोहन को निरंजन के बारे में बताते हैं कि, "निरंजन के दादा हमारी रियासत के नौकर थे । उनके पिता मेरे साथ खेले हैं ।" मोहन समझ जाता है कि उसके पिता निरंजन और उसके परिवार को इस लायक नहीं समझते कि शीला की शादी उसके साथ की जा सकती है । पर राजनाथ बाद में शीला को निरंजन से मिलने को तैयार करता है, कारण जो समाप्त हो गया है, उसकी लकीर पीटना बुद्धिमानी नहीं होती ।

शीला अपने पिता से कहती है कि, "मैं धनवान पिता की पुत्री न सही, लेकिन अपना कर्तव्य सम्मान जानती हूँ ।" ..... उसकी धारणा है कि अकेली एक जानकी में इस देश की नारी जाति लय हो चुकी है । जिस तरह जानकी ने रावण से बातें की थी उसी तरह मैं भी एकांत में बात कर लूंगी । मुझे न कोई भय है और न आशंका ।" जब मोहन निरंजन को स्टेशन पहुँचाने के लिए तैयार होकर आता है तो वह उसे कहती है कि 'निरंजन मन और आत्मा का रोगी है ।' अतः अब उससे बात करने में न कोई संकोच है और न ही भय । आत्मविश्वास से भरी शीला अपने भाई को बताती है कि, "अब तब उसकी कृति तुम पर कृपा करने की थी, लेकिन अब वह तुम्हारी कृपा चाहेगा कि तुम अपनी बहिन उसे दो ।"

शीला और निरंजन मिलते है । निरंजन शीला को पुराने

विचारों की लड़की मानकर उसे हीन प्रमाणित करना चाहता है । पर शीला उसकी बात काटती है और कहती हैं कि "स्वस्थ परंपराएँ और प्रगतिशील जीवन मूल्य जो किसी भी समय इस देश में प्रचलित रहे, आज भी अपना संदर्भ बनाए हुए है "

निरंजन के पास उसकी इस बात का कोई उत्तर नहीं है । वह निरंजन से स्पष्ट कहती है कि जितना कोई विवाह के बाद अपनी पत्नी से पाता होगा, उतना आप मुझसे पहले ही ले लेना चाहते थे । "शीला की स्पष्ट बातें सहने की क्षमता निरंजन में नहीं है । वह जाने के लिए उठ खड़ा होता है तो शीला उसका हाथ पकड़ कर बैठा लेती है । वह उसे कहती है कि, 'कल रात आप जागते रहे, इससे प्रकट है कि आप में संयम की कमी है तथा आप इस देश के प्रति ईमानदार नहीं है । आप जिस आधुनिकता की बात कहते हैं उसके अनुसार शादी होने के बाद अगर मैं बीमार पड़ गई, अंग-यंग हो गया या आँख फूट गई तो आप मुझे छोड़ देंगे क्या ?' निरंजन उसकी तर्क-शैली से अत्यंत प्रभावित होता है और अपना आकर्षण प्रकट करता है । और अंत में अपना अहंकार त्याग कर झुकता है और स्वीकार करता है कि हम लोगों का कोई पूर्व जन्म का संयोग था जिसके परिणामस्वरूप मिल सके और एक दूसरे को अपनाने का अवसर मिला । शीला उसकी बात का समर्थन करती हुई कहती है कि 'जीवन भर का सुख और संतोष इसी विश्वास पर टिका रहता है कि हम पूर्व संयोग के आधार पर एक दूसरे के बने हैं और आजीवन बने रहेंगे । निरंजन कहता है कि इस 'एक दिन' में मेरा सारा जीवन संवर गया और इस एक दिन में ही मैंने सब कुछ पा लिया है । एकांकी के शीर्षक की सार्थकता इन्हीं अंतिम पंक्तियों में सिद्ध हो जाती है ।

28B.4. कथानक की समीक्षा

आलोच्य एकांकी का कथानक अत्यंत मौलिक और प्रभावपूर्ण है । भारतीय और पाश्चात्य दोनों प्रकार की

विचारधाराओं को दूसरे के सामने रखकर उनके गुण-दोषों की परीक्षा क्री गई है । राजनाथ और शीला भारतीय विचारधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि मोहन और निरंजन आधुनिक पाश्चात्य विचारधारा के समर्थक हैं । कथानक बार-बार यह घोषणा करता है कि जब तक भारतीय जन-जीवन प्राचीन मूल्यों और आदर्शों से संबंधित नहीं होगा, जो आज भी अपना संदर्भ रखते हैं, तब तक यहाँ के निवासी सुखी और भाव संपन्न नहीं हो सकते । एकांकी का ताना-बाना इस कौशल के साथ बुना गया है कि घटनाएँ एक दूसरे के साथ कार्य-कारण सूत्र में जुट गई है । विषय सामाजिक महत्व का और प्रत्येक गृहस्थ के लिए उसके अपने जीवन से जुड़ा हुआ है, इसलिए इसकी रोचकता और प्रभविष्णुता असंदिग्ध है । 'एक दिन' में जो कुछ वर्णित या प्रदर्शित है उससे अधिक ऐसा कुछ है जो व्यंग्य है और उसको जाने बिना वर्तमान का आस्वादन संभव नहीं होता । एकांकी की कथा जिज्ञासा के उन तत्वों की रक्षा करती चलती है जो इसे निरंतर सक्रिय बनाये रखते हैं । ज्यों-ज्यों एकांकी आगे बढ़ता है दर्शक की जिज्ञासा बढ़ती चली जाती है । अपनी स्वाभाविकता उद्देश्योन्मुखता और उपयुक्तता के कारण इस कथानक की महता सर्वस्वीकृत है ।

28B.5. शीर्षक की सार्थकता

एकांकीकार ने 'एक दिन' शीर्षक के अंतर्गत यह स्पष्ट करना चाहा है कि निरंजन और शीला ने 'एक दिन' में वह प्राप्त कर लिया जो सारे जीवन का निचोड़ हो सकत है । एकांकी के अंत की वे पंक्तियाँ अत्यंत सार्थक है जिनमें कहा गया है, ''इस एक दिन में मेरा सारा जीवन समा गया । पहले जो कुछ था और बाद में जो कुछ होगा ।''[1] शीर्षक की सार्थकता इस बात में भी है कि सर्वाधिक महत्वपूर्ण निर्णय कुछेक क्षणों में होते है और वे सीमित क्षण बहुत लंबे समय से भी अधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं ।

28B.6. पात्र / चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में कुल चार पात्र हैं - 1.शीला, 2.राजनाथ, 3.निरंजन, 4.मोहन, शीला के विवाह के प्रश्न को लेकर ही सारा ऊहापोह चलता है, इसलिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण पात्र है शीला ।

28B.6.1. शीला

शीला न कोई वनदेवी है न सुरबाला । वह इसी नश्वर जगत् की ऐसी संस्कारवान कन्या है जिसकी शिक्षा न कॉलेज में हुई है और न विश्वविद्यालय में । उसने बाप के सानिध्य में रहकर, रामायण-महाभारत कालीन भारतीय संस्कृति और उसके अमूल्य जीवन-दर्शन को जाना ही नहीं, वरन् अपने जीवन में धारण कर लिया है । उसने प्यार करना सिखा है, हकंतु अंधी होकर नहीं, वरन् सजग और चैतन्य होकर । उसे उस प्रणय निवेदन में छिछोरापन और वासना की गंध अनुभव होती.है जो केवल नैमत्तिक और क्षणिक सुखोपभोग के उद्देश्य से प्रेरित रहती है । वह प्रणय में उस आदर्श की स्थापना श्रेयष्कर मानती है जो भारतीय जीवन के अतीत आदर्श को लेकर चले । उसके व्यवहार और चरित्र से प्रकट है कि नम्रता, सुशीलता, सच्चरित्रता, संयम, दृढ़ता एवं आत्मगौरव जैसे गुण उसे सहज रूप से प्राप्त हैं । अपने स्वाभिमान और मर्यादा की रक्षा के लिए बड़े से बड़े सुख का त्याग करने में उसे कोई संकोच नहीं होता । वह कहती है, "वे अपने घर के बड़े होंगे, इस घर की बड़ी मैं हूँ । आपके पास धन नहीं है, पर क्या भाव भी नहीं है मेरे लिए ? किसी पेड़ के नीचे ..... झोपड़ी में सुखी रहूँगी । जानकी के चौदह वर्ष वन में बीत गए । मैं क्या हूँ ? जिसका संग हो उसका आदर और विश्वास मिल जाए, इससे बड़ा धन सोने चांदी में लिपटना नहीं है ।"

शीला का आदर्श जनक नंदिनी जानकी है । जानकी का त्याग और क्षमा उसे सर्वश्रेष्ठ मूल्य प्रतीत होते हैं । इसीलिए वह

कहती है कि अकेली एक जानकी में इस देश की नारी जाति लय हो चुकी है । मोहन को उसका यह आदर्श आज के युग में उपयुक्त नहीं लगता, उसके विचारों को चुनौती देती हुई शीला कहती है, ''जानकी का युग इस देश से कभी नहीं मिटेगा । मैं जानकी हूँ । इस देश की कोई भी स्त्री जानकी है । जब तक हमारे भीतर जानकी का त्याग है, जानकी की क्षमा है, तब तक हम वही हैं । तुम्हारे लिए जानकी पौराणिक है, इसलिए असत्य है । मेरे लिए वे भावगम्य है । उनके भीतर मेरी सारी समस्याएँ, सारे समाधान है । राम में तो मैं विश्वास कर सकती हूँ, जानकी में अविश्वास का अधिकार तुम्हें नहीं है ।

शीला का आत्मविश्वास उसके चरित्र की शक्ति है । उसके चरित्र में आत्मदृढ़ता पूर्व रुपेण विकसित है । उसका चरित्र इतना दृढ़ और पुष्ट है कि उसे किसी से भय नहीं लगता । दृढ़ता के लिए आदर्शों का आधार आवश्यक होता है । शीला के पास यह आधार मौजूद है । इसीलिए वह निडर होकर वीर-बाला के समान अपने पिता और भाई को आश्वस्त कर देती है कि उसे निरंजन के साथ एकांत में बातचीत करने में कोई कठिनाई नहीं होगी कारण - ''रावण की लंका में जानकी उससे डरी नहीं और अब मैं अपने घर में उनसे डरूँगी ?'' निर्भयता और दृढ़ता के साथ-साथ कृतज्ञता और शालिनता की कोई कमी शीला के चरित्र में दिखाई नहीं देती । निरंजन जैसे सुशिक्षित और आधुनिक युवक से बात करते समय उसे न कोई झिझक होती है और न घबराहट । उसकी स्पष्टवादिता अपनी विनम्रता में महिमामयी हो उठती है ।

शीला नारी मनोविज्ञान की अध्येता है । वह निरंजन को बताती है - ''स्त्री पुरुष की असावधानी को, उसके अल्हढपन को प्रेम करती है ! आस्था और अनुभूति युक्त होने के कारण शीला की तर्कशैली अकाट्य ही नहीं सुननेवाले के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ती है और वह उसके तर्कों से सहमत होने को विवश हो जाता है । वह निरंजन से कहती है कि यदि वह विवाह के बाद

मुझसे मिलता तो मैं उसके चारों ओर ऐसे भाँवर देती जैसे यह पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भाँवर देती हैं और मैं पृथ्वी के समान ही आपके आकर्षण में बँधी रहती । निरंजन उसके इन विचारों से इतना कायल हो जाता है कि प्रणय-याचना करता है । प्रणय का अर्थ समझाती हुई वह कहती है "दो व्यक्तियों के भेद और साहस का मिट जाना ही प्रणय है । यहाँ न रुचि भेद है न वृद्धि भेद । शंकर का आधा शरीर इसलिए पार्वती का है ।" शीला के चरित्र का प्रभाव आदर्श की दृढ़ता और अड़िग आस्था निरंजन को परिवर्तित कर देती है । उसके अहंकार का विलिचन हो जाता है । जो दान देने आया था वह याचक बन जाता है ।

इस प्रकार उपर्युक्त विशेषताओं से परिपूर्ण शीला का चरित्र महिमापूर्ण है ।

28B.6.2. राजनाथ

शीला का महिमाशाली चरित्र उसके पिता राजनाथ की देन है । राजनाथ ने इतिहास, संस्कृति, धर्म, दर्शन और जीवन को गहराई के साथ देखा, सुना, समझा और भोगा है । राजनाथ की मान्यताएँ खुद मिश्र जी की ही मान्यताएँ है । राजनाथ भौतिक सुख, संपत्ति, धन और मानवीयता को श्रेष्ठ मानता है । वह प्राकृतिक नियमों को मानव नियमों की अपेक्षा अधिक सवाभाविक और स्थायी ठहराता है । यदि यह कहें कि उसका प्रयास प्राचीन जीवन-मूल्यों और सांस्कृतिक इयत्ताओं की आधुनिक युगीन व्याख्या करना है तो अनुचित न होगा । उसकी व्याख्या न अव्यावहारिक और न पिष्टपेषण मात्र । वह आज के संदर्भ को समझकर, प्रगतिशील तत्वों को दृष्टि में रखकर तथा लोक कल्याण की दृष्टि से व्यवहार पर खरी उत्तर सकने वाली बात कहता है । राजनाथ की दृष्टि अत्यंत पैनी है । वह मोहन के तर्कों को आसानी से निरस्त कर देता है । प्राचीन आदर्शों को स्वप्रत कहने वाले मोहन को मुँह तोड़ उत्तर देते हुए बताता है - "बिना इन सपनों के

मनुष्य दरिद्र हो उठेगा । इन्हीं से हम धनी है मोहन ! इतिहास पढ़ते हो तुम एम.ए. में और वह निरंजन भी । निकाल दो इतिहास से इन सपनों को देखो वहाँ फिर क्या बचता है ?' राजनाथ मर्यादा और आदर्श को समझाते हुए उसे उपयोगितावादी तुला पर तोलता है, जिससे आधुनिक विचारधारा का प्रतीक मोहन जैसा युवक भी उन्हें स्वीकार कर सके, ''पूँजी वाले बनिये से सामंत कभी बुरा नहीं होता । मर्यादा और आदर्श की बातें चाहे झूठी ही क्यों न हो, व्यक्ति को नीचे नहीं उतरने देती । गीध की तरह डैने खोलकर, वह ऊँचे आकाश में भर जाता हैं ।''

राजनाथ की दृष्टि निर्मल-विवेकपूर्ण और सत्य असत्य का निर्णय करने में समर्थ है । मोहन जब निरंजन के पिता के वैभव की प्रशंसा करता है तो राजनाथ उससे अभिभूत नहीं होता । एक आत्मसंयमी गृहस्थ की तरह समझाता है - 'जिसे देखो, धन से अलग कर देखो, जो तुम्हारे इस युग में जन्म ले रहा है, जो धन और अधिकार से नहीं अपने गुणों से आगे बढ़ेगा ।'

इस प्रकार हम देखते हैं राजनाथ का व्यक्तित्व अपनी परंपरावादिता के साथ-साथ ही अत्यंत सुलझा हुआ लगता है । शीला और मोहन के साथ वार्तालाप हमें इसकी प्रचीती कराता है ।

28B.6.3. निरंजन

निरंजन का चरित्र एक सामान्य पढ़े लिखे युवक जैसा है । वह अपने मित्र के आग्रह पर गाँव आता है । पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होने के कारण वह चाहता है कि उसकी जीवन संगिनी सुंदर, सुशीक्षित, आज्ञाकारिणी और बुद्धिमान हो । वह शीला को सभी प्रकार से परखना चाहता है । उसमें न विवेक है न अनुभव । वह शहर के जिस वातावरण में रहता है उसका इतना अभ्यस्त हो चुका है कि गाँव में जाकर भी उसी की अपेक्षा करता है । शीला शालीन कन्या है । वह निरंजन की उच्छृंखलत का उत्तर दें नहीं

पाती तो वह क्रोधित हो उठता है और रात को ही वापस लौट जाने का आग्रह करता है । लेकिन जब वह शीला को सही-सही परिचय पाता है तो मन को भी परिखर्तित कर लेता है । उसे अपने सतही विचारों और आदर्शों का खोखलेपन का अहसास शीला की गहरी और मर्यादापूर्ण बातों से हो जाता है । वह शीला का प्रेमी बन जाता है ।

मोहन भी निरंजन जैसी विचारधारा का है । वह निरंजन की प्रतिक्रिया से पूर्णतः सहमत है । वह शीला को धमकी देता है कि यदि उसने निरंजन से एकांत में बात नहीं की तो उसका मुँह कभी नहीं देखोगे । राजनाथ के हस्तक्षेप पर निरंजन और शीला मिलते हैं । निरंजन अधिक शिक्षित होने और नागरिक होने पर भी न शीला के समान बुद्धिमान है और न गुणसम्पन्न । स्वभावतः उसे शीला के सामने झुकना पड़ता है । पुनः याचक बन जाने पर शीला उसे स्वीकार कर लेती है । निरंजन और मोहन की आकांक्षा पूरी हो जाती है ।

एकांकीकार ने सामान्य और विशिष्ट की तुलना कर यह प्रदर्शित कर दिया है कि भारतीय सांस्कृतिक परंपरा को उसके परिप्रेक्ष्य में समझने वाले व्यक्ति ही श्रेष्ठ है । इस एकांकी की पात्र योजना उद्देश्य की पूर्ति में सहायक और मनोविज्ञानानुमोदित है ।

28B.7. संवाद

प्रस्तुत एकांकी के संवाद सांक्षिप्त, मर्मस्पर्शी, चरित्रगत विशेषताओं को उद्घाटित करनेवाले और कथासूत्र को निरंतर अग्रसर करनेवाले है । एकांकी संवादों के माध्यम से ही अपनी परम स्थिति करता है । कथोपकथन जितने स्वाभाविक हैं उतने ही पात्रानुकूल । शीला और निरंजन के संवादों के माध्यम से दोनों पात्रों की नैतिकता, तर्कशक्ति, विवेक और कौशल को ही नहीं समझ सकते, वरन् उनकी सांस्कृतिक पृष्ठिभूमि को भी हृदयंगम कर सकते हैं । संवाद इतने प्रवाहपूर्ण, स्वाभाविक और रंगमंच की

दृष्टि से उपयुक्त हैं कि इनमें कोई दोष पाना कठिन है । यह ठीक है कि कुछ संवाद अधिक लंबे और ऐसी शैली में है जिन्हें सामान्य दर्शक के लिए समझना कठिन होगा, लेकिन एकांकी के स्तर, सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि और समस्या को देखते हुए उन्हें उचित माना जायेगा ।

28B.8. प्रतीकात्मकता

एकांकी कतिपय प्रतीकों को लेकर चलता है और इसका शीर्षक निश्चित रूप से प्रतीकात्मक है । स्थान-स्थान पर इन प्रतीकों को स्पष्ट करने का भी प्रयास भी हुआ है । पात्रों और घटनाओं की प्रतीकात्मकता का ज्ञान शीला के इस कथन से हो जाता है - 'बुद्धि स्त्री है और बल है पुरुष बुद्धि और बल के मेल से व्यक्ति संपूर्णता को प्राप्त करता है । मंचीयता की दृष्टि से इस एकांकी को अत्यंत सफल और मंचन योग्य माना गया है ।

मिश्रजी ने संकलन-त्रय का पूर्णरुपेण पालन किया है । एकांकी का प्रभाव क्रमश बढ़ता गया है और अंत में जाकर दर्शकों को अभिभूत कर देने की क्षमता उसमें है । डॉ.देवराज के अनुसार सांस्कृतिक पुनर्व्याख्या से युक्त रचनाएँ महानता की कोटि में आती है । उस दृष्टि से इस एकांकी को महान कहना इसके साथ न्याय करना होगा ।

28B.9. भाषा-शैली

लक्ष्मी नारायण मिश्र का प्रस्तुत एकांकी अपने कथ्य में जितना विशिष्ट है उसकी अभिव्यक्ति और रचना-कौशल भी उतना ही अभिनव है । एकांकीकार ने रंगमंचीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पात्रानुकूल भाषा-शैली की आयोजना द्वारा उन दार्शनिक और नैतिक मूल्यों को कलात्मक अभिव्यक्ति दी है जो आज के युग में विस्मृत हो चुके हैं । पात्रों का स्तर तथा नैतिक पृष्ठ भूमि उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली से अभिव्यजित है ।

28B.10. उद्देश्य

एकांकी का मूल स्वर भारतीय जीवन में उभरते हुए नवीन जीवन-मूल्यों क आकलन विवेक समस्त दृष्टि से करने का है । कथानक बार-बार यह घोषणा करता है कि जब तक भारतीय जन-जीवन प्राचीन मूल्यों और आदर्शों संबंधित नहीं होगा, जो आज भी अपना संदर्भ रखते हैं, तब तक यहाँ के निवासी सुखी और भाव संपन्न नहीं हो सकते है । अपनी स्वाभाविकता, उद्देश्योन्मुखता और उपयुक्तता के कारण इसकी अपनी महत्ता है ।

28B.11. बोध प्रश्न

1. एकाँकी कला के आधार पर 'एक दिन' एकाँकी की विशेषता बताइए ।

NOTES

NOTES

इकाई उनतीस -ए : राजपूत की हार - सुदर्शन

इकाई की रूपरेखा

29A.0. उद्देश्य

29A.1. प्रस्तावना

29A.2. लेखक परिचय

29A.3. कथानक

29A.4. पात्र / चरित्र-चित्रण

- 29A.4.1. कुलीना
- 29A.4.2. महामाया
- 29A.4.3. महाराणा

29A.5. संवाद

29A.6..भाषा - शैली

29A.7. उद्देश्य

29A.8. बोध प्रश्न

29A.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने एकाँकी कला के आधार पर लक्ष्मी नारायण मिश्र विरचित 'एक दिन' एकाँकी के बारे में अध्ययन किया और जानकारी भी प्राप्त कर लीं ।

29A.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आप सुप्रसिद्ध एकाँकीकार सुदर्शन से रचित ऐतिहासिक एकाँकी 'राजपूत की हार' के बारे में अध्ययन करने जा रहे हैं । प्रस्तुत एकाँकी में राजपूतों का धर्म, स्वाभिमान का चित्रण भी है ।

29A.2. लेखक परिचय

श्री सुदर्शन जी का जन्म सियालकोट, पंजाब में एक माध्यम श्रेणी के परिवार में हुआ । आपने बी.ए. तक शिक्षा पाई है । बचपन से ही आपकी रुचि साहित्य की ओर थी । श्री प्रेमचंद जी की ही भाँति आपने भी पहले उर्दू में लिखा और पर्याप्त प्रसिद्धि पाई । बाद में आपने हिन्दी में लिखना शुरु किया और हिन्दी के कलाकारों में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया । हिन्दी कहानी-लेखकों में प्रेमचंद जी के बाद आपको ही सर्वाधिक लोकप्रियता मिली । यद्यपि आपकी ख्याति कहानी-लेखक के रूप में है, पर आपने कई सुन्दर अभिनेय एकांकी भी लिखे हैं ।

आपकी भाषा सरल, रोचक और भावूपर्ण होती है । थोड़े-से नपे-तुले शब्दों में दृश्य का सजीव चित्रण करने में आप सिद्धहस्त हैं । आप आदर्शवादी कलाकार हैं । पाठक के हृदय को कल्याणकारी आदर्श की ओर प्रेरित करना आपका ध्येय है ।

आजकल आप बंबई में रहकर चल-चित्रों के लिए कथानकों का सृजन कर रहे हैं ।

29A.3. कथानक

प्रसिद्ध कहानीकार सुदर्शन ने कुछ एकांकी नाटकों की रचना की थी । इनमें उल्लेखनीय हैं - जब आँखे खुलती हैं', 'आनोरी मजिस्ट्रेट' प्रहसन, 'राजपूत की हार' और 'छाया' ।

'राजपूत की हार' में सुदर्शनजी ने मध्यकालीन भारत के स्त्री-समाज के स्वाभिमान और मातृप्रेम का आदर्श चित्रण किया है । 'राजपूत की हार' परंपरामुक्त हो कर नयी दिशा का संकेत वाला एकांकी नाटक है ।

'रातपूत की हार' जोधपुर के राणा और उनकी रानी महामाया से संबंद्ध है । इसमें लेखक ने चरित्रांकने की ओर विशेष-रूप से ध्यान दिया है और एक ही स्थिति की प्रतिक्रिया स्वरूप माता और पत्नी की भावनाओं को अंकित करने का प्रयत्न किया है । राणा जसवंतसिंह युद्धक्षेत्र से पराजित होकर लौट आये हैं - वे कायर नहीं है, पर क्षण विशेष की दुर्बलता ने उन्हें पलायन की प्रेरणा दी थी, जिसका उन्हें स्वयं दुःख है ।

राजपूत की पत्नी अपने पति की यह पराजय सहन करने में अपने को असमर्थ पाती है - वह महाराणा का स्वागत करने को तैयार नहीं है और किले का द्वार बंद कर देती है । महामाया यह सहन ही नहीं कर सकती कि कोई राजपूत युद्धक्षेत्र से पराजित होकर कैसे लौट सकता है । वह कुलीना से कहती है, "मेरा खयाल था, वह आदर के जीवन और आदर की मृत्यु दोनों की व्यवस्था जानता है, मगर, हाय शोक ! यह मेरी भूल थी वह हारकर भी, अपनी और दूसरों की दृष्टि में अपमानित होकर भी जीवित रहना चाहता है ।" महामाया एक बार यह भी सोच जाती हैं, इस प्रकार लौटनेवाला व्यक्ति उसका पति राणा जसवंतसिंह न होकर कोई छलिया होगा । कारण जसवंतसिंह कायर न थे । वह कहती हैं, उनकी रगों में न हारने वाली शक्ति, उनका लहू में न

बुझेने वाली अग्नि, उनकी भुजाओं में न झुकनेवाली शक्ति थी । मैंने उनको निकट होकर देखा है, मैंने उनका दिल पढ़ा है - वे सूरमा थे । उनको आन प्यारी थी, जान प्यारी न थी ।

महामाया को पति की इस प्रकार की वापसी इतना दुखी कर जाती है कि वह पति के प्रति कठोर हो जाती है । उसको अनेक व्यंग्यबाणों से आहत करती है । सहेलियों से चिता रचने की आज्ञा तक देती है । अपने पति के इस प्रकार के व्यवहार से वह अपना मानसिक संतुलन खोती सी आक्रोश भी करती है ।

जसवंत सिंह की माता कुलीना को भी दुःख है पर वह इतना कठोर नहीं हो पाती और प्रेम भाव से अपने पुत्र में पुन. वीरता का संचार करना चाहती है । माँ और पत्नी में संघर्ष होता है । उसे अपनी बहू की अप्रसन्नता के प्रति क्रोध नहीं चिंता है । माँ महामाया को प्रेरित करती है कि वह युद्ध में लौटे हुए अपने पति का सत्कार करे, क्योंकि यही उसके मानसिक रोग की औषधि है । महामाया को काफी समझाने के बाद इसके लिए तैयार होती है, और हलवा बनाने लगती है, कडाई में कड़छा चलने लगता है, लोहा से लोहा बजने लगता है । माँ इसी बात को लेकर बड़े मीठे ढंग से पुत्र पर व्यंग्य करती है, ''क्या तुम्हें मालूम नहीं कि लोहे से लोहा बजते देखकर मेरे बेटा मेरी गोद में छिपने के लिए यहाँ भागकर आया है ? क्या तुम उसे यहाँ से भी भगाना चाहती हो ? बेटी ! अब वह कहाँ जायेगा, यहाँ से भागकर उसे आश्रय पाने को स्थान कहाँ मिलेगा - परमेश्वर के लिए यह लोहे की कड़छी बाहर फेंक दो । कहीं ऐसा न हो, वह फिर लोहे की कढ़ाई से टकरा जाय और मेरा बेटा डरकर यहाँ से भी भाग निकले, फिर मैं क्या करूँगी ।''

जसवंतसिंह माता का व्यंग्य समझ जाते हैं । अपनी पत्नी से अपने बुजदिली और कायरता के लिए क्षमा मांगते हैं और फिर युद्ध के लिए तैयार हो जाते हैं ।

'राजपूत की हार' नाटक में इस प्रकार हमें स्त्री के स्वाभिमान, राजपूतों की आन तथा मातृप्रेम का आदर्श प्राप्त होता है ।

29A.4. पात्र / चरित्र-चित्रण

सुदर्शन लिखित 'राजपूत की हार' एकांकी में प्रमुख तीन पात्र हैं - 1.कुलीना, 2.महामाया, 3.महाराणा । इन तीनों का एकांकी में अपना महत्व है । उनका चरित्र-चित्रण निम्नलिखित है ।

29A.4.1. कुलीना

कुलीना जोधपुर के महाराणा की माता है । वह राजपूतानी है । उसने अपने बेटे को राजपूतों की आन और शान की उचित शिक्षा दी है । किंतु महाराणा युद्ध से वापस लौट आते । उनकी यूँ वापस लौटना उसे अच्छा नहीं लगता पर वह अपना यह दर्द न तो अपनी बहू महामाया के सम्मुख व्यक्त कर सकती है और ना ही वह महाराणा को कुछ कह सकती है । महामाया अपने पति के इस प्रकार लौटने से अप्रसन्न है, और अपनी अप्रसन्नता कुलीना के सामने व्यक्त करती है । कभी वह अपना क्रोध व्यक्त करती हुई माता को ताने भी देती हैं । पर बड़े धैर्य के साथ वह सब सुनती है । कुलीना को समय की नज़ाकत का ध्यान है, वह महामाया की मानसिक अवस्था को भली-भाँति जानती है, इसलिए जब वह कहती है कि, "युद्धभूमि से लौटा यह व्यक्ति उसका बेटा नहीं हो सकता ।" तो वह उसे बस इतना ही कहती है कि "चाँद और सूरज भी ग्रहण समय काले हो जाते हैं । कुलीना को अपने पुत्र पर विश्वास है । उसकी वीरता पर और उसके साहस पर उसे गर्व भी है । लेकिन उसका यूँ शत्रु को पीठ दिखाकर लौटना उसे दुविधा में डालता है । जब महामाया उसे कहती है कि आनेवाला व्यक्ति 'राणा' न होकर कोई 'छलिया' है तो उसे भी यही लगता

है । जब महामाया अपने पति के साहस और शौर्य का गुणगान करती है तो उसे प्रसन्नता होती है ।

महल में राणा के इस प्रकार लौटने से महामाया संभ्रमित होती है । उसका उस प्रकार का व्यवहार कुलीना की चिंता का विषय बन जाता है । दूसरी तरफ वह अपने बेटे 'राणा' के प्रति भी चिंतित है । अचलसिंह से वह महाराणा का समाचार तो पाती रहती है । पर कुछ नहीं कर सकती । वह राजमाता तो है, पर वर्तमान की रानी महामाया होने के कारण वह आदेश देने में हिचकिचाती है ।

लेकिन कुलीना अंत में निर्णय लेकर महामाया को राणा जसवंतसिंह के साथ अच्छा व्यवहार करने के लिए कहती है । महामाया पहले तो मानती नहीं । लेकिन जब वह उसे कहती है कि बेटे के मानसिक रोग को दूर करेन के लिए उसे रसोईघर में ले जाकर हलवा खिाल देना होगा । महामाया को माता की बात समझ नहीं आती । कुलीना उसे समझाती है, "वह हलवा उसके गले के नीचे न उतरेगा । वह इसे केवल एक बाद देखेगा और घोड़े पर चढ़कर किले से बाहर निकल जाएगा । मैं उस भूले हुए शेर के बच्चे को शीशे के सामने ले जाकर उसे उसका मुँह दिखा देना चाहती हूँ ।" और अपनी योजना के अनुसार वह महामाया को जसवंतसिंह के समेत रसोईघर में भेजती है । महामाया का क्रोध अभी शांत नहीं हुआ । राणा और महामाया के बीच शब्द-युद्ध होता रहत है और आखिर गुस्से से वह हलवा बनाते समय जोर-जोर से कढ़ाई में कड़छी चलाने लगती है । वह आवाज सुनते ही कुलीना भीतर आती है और महामाया से कहती है, 'अरे बेटी ! कलछी बाहर निकाल, नहीं अंधेर हो जाएगा ।" मामाया कुलीना अपना अमोघ अस्त्र चलाती है "क्या तुम्हें मालूम नहीं कि लोहे से लोहा बजते देखकर मेरा बेटा मेरी गोद में छिपने के लिए यहाँ भागकर आया है ? क्या तुम उसे यहाँ से भी भगाना चाहती हो ? बेटी ! अब वह कहाँ जायेगा ? यहाँ से भागकर उसे आश्रय

पाने को स्थान कहाँ मिलेगा - परमेश्वर के लिए यह लोहे की कलछी बाहर फेंक दो कहीं ऐसा न हो, फिर लोहे की कढ़ाई से टकरा जाय और मेरा बेटा डरकर यहाँ से भाग निकले, फिर मैं क्या करूँगी ? "और यह अस्त्र अचूक लग जाता है । महाराणा माँ का व्यंग्य समझ जाता है और कहता है, "मैं अपनी कायरता के लिए तुम से क्षमा माँगता हूँ ।" कुलीना अपने बेटे को पुनः उसी आन, शान और आत्मगौरवपूर्ण देखकर प्रसन्न होती है । यह कहती है, राणा का इस प्रकार लौटना, कायर होना इसमें उसका ही दोष है । दासी के दूध के बूंद राणा के शरीर में रह जाने के कारण ही राणा ने यह हरकत की है ऐसा उसका विश्वास हो जाता है । पर माँ की सीख से उस कलंक को अपने लहू से धोने के लिए वह तत्पर हो उठता है ।

इस प्रकार सुदर्शन जी ने कुलीना के चरित्र के द्वारा माँ के चरित्र, उसके मातृप्रेम के आदर्श का चित्रण किया है । एक ही घटना की प्रतिक्रिया माँ द्वारा कैसी होती है इसका सुंदर और भावपूर्ण चित्रण माता कुलीना के चरित्र द्वारा ही होता है । कुलीना के चरित्र में गहराई, विचारों का संतुलन, निर्णय तथा स्थितियों को संभालने की पूरी ताक स्पष्ट दिखाई देती है । जहाँ वह अपने देश के प्रति चिंतित है । इसलिए वह महामाया की प्रखर प्रतिक्रिया और तानों को सहज ही समझ सकती है और सह सकती है । कुलीना मातृप्रेम का सहज आदर्श स्थापित करती है ।

29A.4.2. महामाया

महामाया राणा जसवंत सिंह की पत्नी है तथा रानी है । उसे अपने राजपूत पति महाराणा पर अत्यंत गर्व था । वह उसके आदर्शों तथा अपने देश की रक्षा के मर मीटने की वृत्ती पर बलिहारी जाया करती थी । किंतु जब वह सुनती है कि महाराणा जसवंत सिंह रणभूमि से शत्रु को पीठ दिखाकर लौट आये हैं तो उसका दुख होता है । वह व्यथित होती है । वह अशांत और अप्रसन्न है ।

महाराणा को लौटे हुए आठ दिन हुए हैं, पर वह उससे ठीक तरह से न मिल पाती है न बोल पाती है । अपने पति का यूँ लौटना उसे इतना अखरता है कि वह उसे कायर कहती है । एक रण बाँकुरे राजपूत का यूँ रण क्षेत्र से भाग आना न केवल उसे लज्जा जनक लगता है बल्कि राजपूतों के वंश पर ही कलंक सा लगता है । इस घटना पर उसकी प्रतिक्रिया सम्मिश्र है, वह कभी माँ पर चिढ़ती है, कभी दासियों को चिता रचने का आदेश देती है, कभी द्वार बंद करने को कहती है, तो कभी सोच-सोचकर बेहोश हो जाती है । उसकी प्रतिक्रिया इतनी तीव्र है कि उसे इस बात का भी होश नहीं रहता कि वह क्रोध में माता के दूध का अपमान कर रही है "अगर वह राजपूत था, अगर उसने वीर माता का दूध पिया था, अगर वह राजपूत सिंहनी की गोद में पलकर युवा हुआ था, तो उसे चाहिए था कि रणभूमि में डट जाता, मृत्यु के भय को पाँव तले मसल डालता और संसार को दिखा देता कि राजपूत का बच्चा मृत्यु और जीवन दोनों को समझता है ।" उसे इस बात पर गर्व था कि उसका पति सूरमा है । कारण उसने उसे राजपूत की परिभाषा देते हुए कहा था, 'राजपूत की कसौटी मौत है और राजपूत वीर के बारे में कहा था कि, "युद्ध क्षेत्र में हार जाना लज्जा की बात नहीं लज्जा की बात यह है कि वीर पुरुष हारकर भी जीता रहे । जो वीरात्मा है, वह हार सकता है, हारकर जीता नहीं रह सकता । अपनी माँ, बहन और स्त्री के सामने सिर नहीं उठा सकता । उसके लिए पराजय और मृत्यु एक ही वस्तु के दो नाम है ।" लेकिन अब वही राजपूत राणा संग्रामसिंह कायरों की तरह युद्ध-क्षेत्र से लौट आया है । ऐसे लौटे अपने पति को वह छलिया समझती है । उसे विश्वास ही नहीं होता राजपूत की आन और शान रखनेवाला वीर इस प्रकार लौट सकता है । उसे लगता है कि राणा युद्ध में वीर गति को प्राप्त हुए हैं इसलिए उन्हें उसे सति जाना होगा । अतः अपने दासियों को वह चिता रचने का आदेश देती है और कहती है, 'मैं आज आग के उड़न-खटोले पर सवार हो जाऊँगी ।

वह इतनी असंतुलित हो जाती है कि पति की परीक्षा लेनाचाहती है । कटार लेकर उसकी छाती में भोंक देना चाहती है । उसके इस कृत्य से राणा की पहचाना होगी । 'अगर वह राणा होंगे, मेरे कर्तव्य-पालन की प्रशंसा करेंगे । कोई लम्पट होगा, कटार देखकर चिल्लाता हुआ भाग जायेगा ।' इसी प्रकार सोचती सोचती वह पगलायी सी हो जाती है । वैद्यराज से उसे औषधी दी जाती है ।

महामाया इतनी स्वाभिमानी स्त्री है कि न तो वह खुद अपमानित होना चाहती है ना ही अपने राज्य में अपने पति और राजपूत वंश का अपमान सहन कर सकती है । पर जिस पति ने ही अपमान-जनक कृत्य किया हो तो वह जल भूनकर रह जाती है । माता कुलीना के समझाने पर भी वह अपने पति का उचित आदर सत्कार नहीं कर सकती, तीखे तथा व्यंग्य बाणों से वह उसे आहत करती है । वह उससे घृणा करती है । पर माँ के जोर देने पर वह उसे हलवा बनाकर खिलाने के लिए राजी तो हो जाती है पर कोई ऐसा मौका नहीं छोड़ती जिससे जसवंत सिंह का अपमान हो । उसकी बातें ऐसी हैं जिससे राणा का हृदय छलनी होता हे । दृष्टव्य है -

महामाया : प्राण बच गये, वही बड़ी बात है । प्राण रक्षा राजपूत का सर्व-प्रथम धर्म है ।

जसवंतसिंह : मैंने अपनी तरफ से पूरा-पूरा यत्न किया, परंतु मेरी कोई पेश न गई ।

महामाया : सत्य हे, असहाय मनुष्य क्या कर सकता है ?

जसवंतसिंह : मनुष्य प्रारब्ध के हाथ का खिलौना है । वह उसे जिधर चाहता है, उठाकर फेंक देता है ।

महामाया : मनुष्य की इससे अच्छी परिभाषा मैंने आज तक नहीं सुनी ।

जसवंतसिंह : मालूम होता है, तुम मेरी हँसी उड़ा रही हो ।

महामाया : राम-राम ! मुझमें यह साहस कहाँ कि आप जैसे विश्वविजयी की हँसी उड़ा सकूँ ?

राणा और महामाया के वार्तालाप से यह ज्ञात हो जाता है कि महामाया अपने पति राणा से घृणा करती है । उसे अपने पति का रण में मर जाना, वीर-गति को प्राप्त होना गँवारा है, पर इस प्रकार लौटना नहीं । उन दोनों के बीच शब्द-युद्ध ही ठन जाता है ।

कुलीन के समझाने पर, महामाया हलवा बनाने लगती है और कुलीना के व्यंग्य से जब राणा को अपनी भूल का अहसास हो जाता है तब, महामाया अपने पति की ओर गर्व से देखती है । अपने वाग्वाणों के लिए क्षमा याचना भी करती है ।

अपने खोये पति की राजपूतानी आन-शान को लौटते देखकर महामाया प्रसन्न है । उसके व्यक्तित्व से राणा भी खुश हैं और उसे कहते हैं, 'स्त्री नहीं है, देवी है । मेरी दृष्टि में तू इतनी पवित्र, इतनी उज्जवल थी ।'

अपने पति को पाकर वह खुश हो उठती है और उसे समर क्षेत्र में अपने प्रेम के साथ विदा करती है ।

29A.5. संवाद

प्रस्तुत एकांकी में प्रयुक्त संवाद संक्षिप्त, चूस्त, छोटे सरल, गतिशील एवं मार्मिक है । प्रस्तुत एकांकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को लेकर लिखा गया है । अतः संवादों की भाषा पात्रानुकूल और प्रभावी है । महामाया और कुलीना के संवादों से ही ऐतिहासिक घटना का परिचय मिलता है । कहीं-कहीं महामाया के संवाद संलाप की तरह लगते हैं, फिर भी उनका कथा ऐक्य में विशेष स्थान होने के कारण और कथा की गति बढ़ाने में विशेष सहायक होने के कारण नहीं लगते । अतः प्रस्तुत एकांकी के संवाद कुतुहलपूर्ण तथा उत्सुकता बढ़ाने वाले हैं ।

29A.6. भाषा - शैली

प्रस्तुत एकांकी की भाषा सहज सरल है । प्रवाहात्मकता के कारण पाठक तथा दर्शक एकांकी की कथा-वस्तु में गतिशील होता हुआ यह जानने को उत्सुक होता है कि आखिर जसवंत सिंह राणा ही है या कोई छलिया । प्रस्तुत एकांकी में एकांकिकार ने राजपूतों की परंपरा और संस्कृति के अनुसार भाषा का प्रयोग किया है, अतः सति, चिता चुनना आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है । भाषा प्रसंगानुरूप और पात्राकूल होने के कारण प्रभावी है ।

29A.7. उद्देश्य

प्रस्तुत एकांकी का प्रमुख उद्देश्य राजपूतों के धर्म, स्वाभिमान का चित्रण करना है ! कथा के इस मूल उद्देश्य के साथ ही एकांकीकार स्त्री के दोनों रूपों को चित्रित करते हैं । 1.पत्नी, 2.माता । पत्नी जहाँ अपने पति का अपमान सहन नहीं कर सकती वहिं वह अपने जाति और जाति धर्म के विरुद्ध आ़चरण भी सहन नहीं कर सकती यह विचार एकांकीकार ने महामाया के चरित्र के माध्यम से अभिव्यक्त किया है । कुलीना राजमाता है उसे भी अपने पुत्र का रण-क्षेत्र से भाग आना सुहाता नहीं है, पर वह बुद्धि और विवेक तथा प्रेम से समस्या को सुलझा जाती है । अतः हम कह सकते हैं कि एकांकीकार ने स्त्री समाज के स्वाभिमान और मातृप्रेम का आदर्श इस एकाँकी के माध्यम प्रस्तुत किया है ।

29A.8. बोध प्रश्न

1. महाकाव्य का चरित्र-चित्रण कीजिए ।
2. इस एकाँकी के माध्यम से एकाँकीकार ने मातृ-प्रेम किस प्रकार व्यक्त किया है ? स्पष्ट कीजिए ।

NOTES

इकाई उनतीस -बी : महाभारत की सांझ - भरतभूषण अग्रवाल

इकाई की रूपरेखा

29B.0. उद्देश्य

29B.1. प्रस्तावना

29B.2. लेखक परिचय

29B.3. कथानक

29B.4. समीक्षा

29B.5 पात्र / चरित्र-चित्रण

29B.5.1. दुर्योधन

29B.6. संवाद

29B.7. भाषा - शैली

29B.8. उद्देश्य

29B.9. बोध प्रश्न

29B.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने ऐतिहासिक एकाँकी 'राजपूत की हार' के बारे में जानकारी प्राप्त कर लीं । इस इकाई में प्रसिद्ध एकाँकीकार अग्रवाल के 'दुर्योधन का चित्रण' नए रूप में दिखाने का प्रयास किया है ।

29B.1. प्रस्तावना

भरत भूषण अग्रवाल हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि ही नहीं बल्कि एकाँकीकार भी है । पाठकों के सामने दुर्योधन का चित्रण नए रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास एकाँकीकार ने किया है ।

29B.2. लेखक परिचय

भरतभूषण अग्रवाल हिंदी के एक मूर्धन्य कवि हैं । वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी है । उन्होंने हिन्दी काव्य के क्षेत्र में ही अपना योगदान नहीं दिया बल्कि एकांकी के क्षेत्र में भी उनका योगदान विशेष रूप से जाना जाता है । उनकी कविता में उस समाज एवं मनुष्य की अभिव्यक्ति है जो अपने ही देश में अकेलेपन और घुटन का अनुभव कर रहा है और अपनी पहचान के लिए प्रयत्नशील है किन्तु भटका हुआ है । नाटक के क्षेत्र में भी भारतभूषण अग्रवाल जी का विशेष योगदान रहा है । रेडियो-नाटक के उदय काल में उसके स्ववतंत्र स्वरूप-विधान का निर्माण नहीं हो सका । प्रारंभिक अवस्था में इसे तत्कालीन प्रसिद्ध रंगमंच एकांकीकारों का ही सहयोग मिला, जिनमें महत्वपूर्ण है अश्क, रामकुमार वर्मा तथा उदयशंकर भट्ट ! भारतभूषण अग्रवाल भी आकाशवाणी से सम्बद्ध है, और समय-समय पर रेडियो के लिए नाटक लिखते रहे है । इनके कुछ उल्लेखनीय रेडियों एकांकी नाटक हैं - 'महाभारत की साँझ', 'अजन्ता की गूँज', 'और खाई बड़ती गयी'; 'युग-युग या पाँच मिनट', 'परछाई', 'दृष्टिदोष', 'गति कि खोज', 'इन्ट्रोडक्शन नाइट', 'हाँ ना और हाँ मगर ना' आदि ।

29B.3. कथानक

'महाभारत की साँझ' एकांकी भारतभूषण अग्रवाल का एक सफल रेडियों नाटक (एकांकी) हैं । प्रस्तुत एकांकी में नाटककार ने महाभारत का एक प्रसंग लिया है और उसकी नये ढंग से व्याख्या करने का प्रयास किया है ।

संजय धृतराष्ट्र को युद्धभूमि पर होनेवाली घटनाओं का वर्णन कर रहा है । आत्म रक्षा का अन्य कोई उपाय न देखकर दुर्योधन द्वैतवन के सरोवर में घुस कर छिप जाता है । अहेरी के द्वारा समाचार पाकर पांडव द्वैतवन के सरोवर के किनारे आते हैं और दुर्योधन को संबोधित करते हुए उसे बाहर आने के लिए उकसाते हैं । सरोवर में छिपे हुए दुर्योधन को भीम और युधिष्ठिर अपने वाग्बाणों से आहत करते हैं, लज्जाजनक शब्दों का प्रयोग कर उसे अपमानित करते हैं, उसकी कायरता पर व्यंग्य करते हैं और पुनः उसे युद्ध के लिए ललकारते हैं । दुर्योधन की सेना तितर-वितर हो गई है, उसका कवच फट गया है, उसके शस्त्रास्त्र चुक गए हैं, वह थक गया है, अतः वह कुछ समय की आकांक्षा करता है । उसके अनुसार उसने भी पांडवों को तेरह वर्ष का समय दिया था । फिर दुर्योधन, भी और युधिष्टिर के बीच धर्म और अधर्म की चर्चा होती है, जो युद्ध के दौरान दोनों पक्षों में हुआ था और आखिर भीम के वाग्वाणों से दुखी होकर दुर्योधन सरोवर के बाहर आता है । उसकी स्थिति अब इतनी करुणापूर्ण हो गयी है कि वह युधिष्ठिर से कहता है, "मेरे प्राणों का नाश करके तुम्हें क्या मिल जाएगा ।" महाभारत का युद्ध उसने अपनी रक्षा के लिए किया है और वह शांति और मेल से रहना चाहता है - यह बात युधिष्ठिर को पाखंडपूर्ण लगती है । फिर वह भीम और युधिष्ठिर को शस्त्र उठाकर शीश उड़ा देने के लिए कहत है ।

किंतु युधिष्ठिर उसे युद्धनीति के अनुसार एक और अवसर देता है । वह कहता है "हम तुम्हें कवच और अस्त्र देंगे । तुम

जिस अस्त्र से लड़ना चाहो बता दो । हममें से केवल एक व्यक्ति ही तुमसे लड़ेगा और यदि तुम जीत ग तो सारा राज्य तुम्हारा ।'' दुर्योधन युधिष्ठिर के कहने पर गदा की माँग करता है । गदा लेकर दुर्योधन रण में उतरता हैं । भीम और दुर्योधन में धमासान युद्ध होता है । दुर्योधन अपना पराक्रम दिखाता है । कृष्ण के संकेत से भीम दुर्योधन की जंघा पर प्रहार करता है और दुर्योधन युद्धभूमि पर आहत होकर गिर पड़ता है ।

दुर्योधन आहत होकर निस्सहाय भूमि पर पड़े है । पहले अश्वत्थामा आकर प्रतिशोध का प्रण लेकर चले जाते हैं और फिर युधिष्ठिर आते हैं । युधिष्ठिर और दुर्योधन के बीच जो वार्तालाप होता है, उस वार्तालाप से ज्ञात होता है कि लेखक दुर्योधन को न्याय देने का प्रयास कर रहे है ।

युधिष्ठिर को इस क्षण अपने सामने देखकर दुर्योधन को लगता है कि जैसे वह उसकी मृत्यु का पर्व मनाने आया हो । युधिष्ठिर दुर्योधन के पास इसलिए आये है कि अगर इस समय दुर्योधन को पश्चाताप हो रहा हो तो उसकी व्यथा को कम किया जाय । पर दुर्योधन को अपने किये पर कोई पश्चाताप नहीं है । उसने कोई पाप नहीं किया है और न ही कोई षडयन्त्र ही रचा है । ना ही गुरुजनों का वध किया है । इसलिए युधिष्ठिर की कोरी सहानुभूति उसे अच्छी नहीं लगती है । युधिष्ठिर की कोरी सहानुभूति उसे अच्छी नहीं लगती है । युधिष्ठिर उसे कहता है कि दुर्योधन के कृत्यों का साक्षी इतिहास स्वयं है । दुर्योधन का अन्तर्द्वन्द्व इस समय ऐसा बाहर फट पड़ता है जिससे उसके मन की हर पीड़ा उभर उठती है । युधिष्ठिर का धर्म, उसका न्याय दुर्योधन के अनुसार मात्र मिथ्या अहंकार है, मात्र दम्भ है । आत्म-प्रशंसा है । आत्म-प्रवंचना है । दुर्योधन के अनुसार हस्तिनापुर राज्य पर पांडवों का स्त्री पर अधिकार नहीं है । कारण मूलतः राज्य का अधिकार सिर्फ धृतराष्ट्र का था । राज्य संचालन में अन्धत्व के क़ारण उन्हें असुविधा होती थी इसलिए पाण्डु को

देखभाल का कार्य मिला । इस तथ्य को किसी ने जाना ही नहीं है । लोगों ने दुर्योधन का हठ मात्र देखा है । युधिष्ठिर के गुणों का प्रभाव तथा रक्तपात से वचने के प्रयत्न में किसी ने न न्याय देखा न सत्य ।

युधिष्ठिर और दुर्योधन के बीच इसी प्रकार की बातें होती हैं । युधिष्ठिर वास्तव में दुर्योधन की पीड़ा बाँटने आया था । उसका दुखभार हटलका करने आया था । किंतु युद्ध के लिए कारण बनी स्थितियों तथा युद्ध के दौरान घटी घटनाओं का ही विश्लेषण विवेचन होता है । युधिष्ठिर की राज्य-लिप्सा के कारण ही खून की होली खेली गयी, यह अरोप बार-बार दुर्योधन उस पर करता है । उसका यह भी आरोप है कि युधिष्ठिर ने हमेशा सत्य को छिपाने का काम किया है । इन्द्रानाथ, राजसूय यज्ञ, शिशुपाल वध, द्युत में राज्य को दाँव पर लगाना इन सबके पीछे युधिष्ठिर की राज्य-लिप्सा ही कांम करती रही है - इस आरोप पर युधिष्ठिर उत्तर ही नहीं दे पाता । दुर्योधन हर घटना का अपने अनुसार अर्थ लगाता है । युधिष्ठिर कहता है कि दुर्योधन अब सत्य और मिथ्या में भेद करने में असमर्थ हो रहा है । दुर्योधन धीरे-धीरे मृत्यु के समीप पहुँच रहा है । इस क्षण उसे इस बात का हर्ष है कि उसे वीर-गति मिली है, वह इस समय एकांत चाहता है और युधिष्ठिर को वहाँ से जाने को कहता है । उसमें किसी भी प्रकार का कोई पश्चाताप नहीं है, ग्लानि नहीं है । पर एक दुख है कि, 'मेरे पिता अंधे क्यों हुए ?'' इस प्रकार करुणापूर्व दृश्य के साथ एकांकी समाप्त होता है ।

29B.4. समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी में एकांकीकार ने महाभारत के दुर्योधन के मन के अन्तर्द्वन्द्व को उभारा है । एक ओर पुत्रप्रेम से अभिभूत धृतराष्ट्र और आत्मरक्षा के लिए द्वैतवन के सरोवर में घुसे हुए दुर्योधन है तो दूसरी ओर पांडव है । ये दोनों अपनी-अपनी जगह पर अपने किए कराए का स्पष्टीकरण देते हैं और अपना-अपना

समर्थन करने में तुले हुए हैं । मगर सत्य क्या है ? युद्ध के लिए कारणीभूत सत्य क्या दुर्योधन के इन शब्दों में है ? ..... "मेरे पिता अंधे क्यों हुए ! नहीं तो ..... नहीं तो ? " धर्मराज के सत्य धर्म पर निरंतर प्रश्नचिह्न लगानेवाला दुर्योधन मरणोन्मुख होकर भी न अपनी हार मानता है, न उसे पश्चाताप है और ना ही उसे किसी प्रकार की कोई ग्लानि है । वह एक वीर योद्धा के रूप में अंतिम क्षण में भी युधिष्ठिर से रक्कर लेते हुए वीरगति पाने को तैयार है । दुर्योधन को अपने लिए पद नहीं अप्तु अपने पिता के अंधे होने का दुःख है । दुर्योधन और युधिष्ठिर के संवादों में अभिव्यक्त वैचारिकता और संघर्ष देखते ही बनता है ।

लेखक ने दुर्योधन के अंतिम क्षणों को चित्रित करते हुए यह दिखलाना चाहा है कि उसने जो भी पाप किये थे, वे आत्मरक्षार्थ ! यह उसके भाग्य का ही दोष है कि उसके पिता अंधे थे । नाटक में कार्य-व्यापार का अभाव हैं । इसमें युधिष्ठिर और दुर्योधन के संलाप ही प्रधान है । इन्हीं के माध्यम से लेखक ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, पर वे तर्कसंगत एवं प्रभावशाली रूप में हमारे सामने नहीं आ पाते । लेखक दुर्योधन के प्रति श्रोताओं की सहानुभूति जगाना चाहते है, पर ऐसा हो नहीं पाता । संजय ने नैरेटर का काम किया है, और दुर्योधन संबंधी दृश्य मलैशबैक में आये हैं । नाटक का प्रारंभ जिस कलात्मकता के साथ हुआ है, उस कलात्मकता के साथ इसका अंत नहीं हो पाया है ।

प्रस्तुत एकांकी रेडियो नाटक होने के कारण रंग संकेत नहीं है । मात्र ध्वनियों का संकेत है । यह नाटक श्रव्य-रूप में प्रस्तुत होने के कारण अन्य तत्वों का अस्तित्व नहीं ही है । पर इसे सहज ही मंच पर दृश्याभिनय के अनुकूल बनाया जा सकता है ।

29B.5. पात्र / चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में वैसे है तो पाँच पात्र - 1.संजय - कथा

का विवनण देने वाला, 2.धृतराष्ट्र, 3.युधिष्ठिर, 4.भीम, 5.दुर्योधन । किंतु पूरा एकांकी दुर्योधन के चरित्र को ही उजागर करता है । अतः यहाँ केवल दुर्योधन का चरित्र ही प्रस्तुत किया जा रहा है ।

29B.5.1. दुर्योधन

महाभारत में दुर्योधन को राज्यलोलूप, दुरात्मा के रूप में चित्रित किया गया है । वह सुयोधन था, लेकिन उसकी दुर्वृतियों के कारण वह दुर्योधन ही कहलाया । वह महत्वाकांक्षी है, वीर है पर महाभारत में उसके व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन नहीं हो पाया । संभवतः यही कारण है कि भारतभूषण अग्रवाल ने अपने एकांकी 'महाभारत की साँझ' में उसे न्याय देने का प्रयास किया है । पर उन्हें अपने इस प्रयास में पूर्ण सफलता नहीं मिली है ।

युधिष्ठिर और दुर्योधन के वार्तालाप में दुर्योधन का अन्तर्द्वन्द्व उजागर होता है । अपनी आत्मरक्षा के लिए द्वैतवन के सरोवर में छिपे दुर्योधन को भीम और युधिष्ठिर युद्ध के लिए ललकारते हैं, पर निहत्थे, निःशस्त्र दुर्योधन ने अब इतनी शक्ति नहीं कि वह पांडवों से युद्ध करे, इसलिए वह आत्म समर्पण कर उन्हें हत्या के लिए प्रेरित करता है । पर युधिष्ठिर उसे उसकी इच्छानुसार माँगी गदा देकर द्वन्द्व युद्ध के लिए आमांत्रित करता है । गदा मिलने के बाद दुर्योधन अपना पराक्रम दिखाता है । लगता है विजय उसकी ही होगी । पर कृष्ण के संकेत पर (अधर्म से) भी दुर्योधन की जंघा पर वार करता है जिससे पराक्रमी दुर्योधन रणभूमि पर कराहता हुआ गिर पड़ता है और अंततः मृत्युमुखी हो जाता है । इस समय युधिष्ठिर के साथ उसकी बातें उसके मानस में दबे भावों को अभिव्यक्त करती है ।

युद्ध के पूर्व और युद्ध के दौरान जो-जो घटनाएँ घटित हुई, उन घटनाओं का उक भिन्न पक्ष ही सामने लाकर वह युधिष्ठिर के सत्य, धर्म पर निरंतर प्रश्न खिन्न लगाता है । उस इस बात की

शिकायत है कि महाभारत के युद्ध के मूल कारण की ओर किसी का ध्यान नहीं गया । किसी ने सत्य और न्याय की ओर देखा ही नहीं ! हर कोई युधिष्ठिर के गुणों से प्रभावित थे । सारी सहानुभूति केवल पांडवों को ही मिली । वास्तव में हस्तिनापुर का उत्तराधिकारी दुर्योधन ही है, पाण्डु-पुत्र युधिष्ठिर नहीं । पाण्ड़ मात्र राज्य-संचालन के लिए था । राजा नहीं । उसका यह तर्क, "यदि न्याय तुम्हारी ओर था तो फिर भीष्म, द्रोण, कृप, अश्वात्थामा सब मेरी ओर से क्यों लडे ? क्या वे जान-बूझकर अन्याय का साथ दे रहे थे ? यहाँ तक कि कृष्ण जैसे तुम्हारे परम मित्र ने भी मेरी सहायता के लिए अपनी सेना दी । वे चतुर थे, दोनों पक्षों से मैत्री रखना ही उन्होंने अच्छा समझा ! ऐसा क्यों हुआ ? बोलो ? इसीलिए न कि न्याय वास्तव में मेरी ओर था ।" इस पर युधिष्ठिर कुछ उत्तर नहीं दे सकते ।

हमेशा युधिष्ठिर आदि पांडवों ने दुर्योधन पर यह आरोप लगाया है कि उसने ही युद्ध में अधर्म किया है । अभिमन्यु वध की घटना को प्रस्तुत कर उसे अधर्मी ठहराया गया । वह प्रस्तुत एकांकी में युधिष्ठिर से कहता है, "जब भीष्म, द्रोण और कर्ण का वध विरोचित हो सकता है, तो फिर अभिमन्यु वध में ऐसी क्या विशेषता थी ? और आज भीमसेन ने मुझे जिस प्रकार पराजित किया है वही क्या वीरोचित कहलाएगा ?" उसके पक्ष को किसी ने जानने का प्रयास ही नहीं किया । "एक अन्याय की प्रतिष्ठा के लिए इतना ध्वंस किया गया, और सब अंधों की भाँति उसे साकार करते गए । सबने मेरा हठ ही देखा, मेरे पक्ष का न्याय किसी ने नहीं देखा ।"

अपनी मृत्यु के समय वह युधिष्ठिर की सांत्वना नहीं चाहता । उसे किसी भी प्रकार का कोई पश्चाताप नहीं है । उसे बस एक ही बात का दुख है, जो वह अपने साथ लिये जा रहा है - वह कहता है, "यही, यही कि मेरे पिता अंधे क्यों हुए ? नहीं नहीं तो ..... ।"

29B.6. संवाद

प्रस्तुत एकांकी एक श्रव्य नाटक है । रेडियो नाटक है । अतः इसमें ध्वनि प्रभावों और संगीत का व्यवहार कुशलता के साथ प्रयोग किया गया है । संवाद एकांकी के प्राण है । यहाँ दुर्योधन ही विशेष मुखर होने के कारण उसके संवाद संलाप जैसे लगते है । युधिष्ठिर को अपना मत मंडित करने का समय ही नहीं मिलता । दुर्योधन संपूर्ण महाभारत पर जैसी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा है । अतः उसके संवाद लंबे लगते है । युधिष्ठिर के संवाद सक्षिप्त हैं, पर अपने प्रश्नों या छोटी सी प्रतिक्रिया द्वारा वह भी दुर्योधन को बोलनें का अवसर दे रहा है, ऐसा लगता है । संपूर्ण एकांकी दुर्योधन के अंत द्वन्द्व को ही अभिव्यक्त कर रहा है ।

29B.7. भाषा-शैली

प्रस्तुत एकांकी महाभारत काल की है, अतः एकांकी की भाषा संस्कृत गर्भित है । पात्रानुकूल भाषा होने के कारण प्रभावी है । भीम के संवादों में क्रोधाग्नि की ज्वाला भड़कती सी दिखाई देती है तो धृतराष्ट्र की भाषा में निस्सहाय व्यक्ति की पीड़ा उभरती है । प्रस्तुत एकांकी की भाषा रोचक, प्रवाही तथा प्रभावी है ।

29B.8. उद्देश्य

जैसा कि कथानक की समीक्षा में हमने देखा, एकांकीकार ने दुर्योधन के अंतिम क्षणों को चित्रित करते हुए यह दिखलाना चाहा है कि उसने जो भी पाप किये थे, वे आत्मरक्षार्थ ! अतः में वह अपनी रक्षा तो कर नहीं पाता किंतु पाठकों के सामने का दूसरा पहलू रखकर पुनः एक बार सोचने को विवश करता है । कहीं कहीं उसके विचार तर्कपूर्ण नहीं लगते । एकांकीकार दुर्योधन को 'सुयोधन के रूप में स्थापित करने की अपनी चेष्टा में कुछ हद तक सफल हुए है ।

29B.9. बोध प्रश्न

1. भरत-भूषण अग्रवाल ने दुर्योधन को सुयोधन के रूप में कैसे स्थापित करने की प्रयास किया है ? विचार कीजिए ।

NOTES

NOTES

इकाई तीस -ए : नये मेहमान - उदयशंकर भट्ट

इकाई की रूपरेखा

30A.0. उद्देश्य

30A.1. प्रस्तावना

30A.2. लेखक परिचय

30A.3. कथानक

30A.4. समीक्षा

30A.5. पात्र / चरित्र-चित्रण

30A.5.1. विश्वनाथ

30A.5.2. रेवती

30A.6. संवाद

30A.7. भाषा - शैली

30A.8. उद्देश्य

30A.9. बोध प्रश्न

30A.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में 'भरत भूषण अग्रवाल' विरचित 'महाभारत की साँझ' के बारे में अध्ययन किया । इससे आप दुर्योधन को सुयोधन के रूप में किस प्रकार स्थापित करने की चेष्टा एकाँकीकार ने किया, इसका भी आपने अध्ययन किया ।

30A.1. प्रस्तावना

अब आप इस इकाई में उदयशंकर भट्ट की 'नए मेहमान' के बारे में जानेंगे । मध्यम वर्ग की स्थिति के बारे में जानेंगे ।

30A.2. लेखक परिचय

आधुनिक हिंदी-एकांकीकारों में उदयशंकर भट्ट का नाम काफी महत्वपूर्ण है । इन्होंने पचास से अधिक एकांकी नाटकों की रचना की है । इनके एकांकियों के बारे में डॉ.रामकुमार वर्मा लिखते हैं, ''आपके एकांकीयों में मनोभाव बड़ी सरलता से स्पष्ट हो जाते हैं । पात्रों के अनुरूप भाषा की सृष्टि में तो सिद्धहस्त हैं । घटनाओं में कौतूहल चाहे न हो, किंतु स्वाभाविकता के साथ जीवन के चित्रों को स्पष्ट करने में भट्ट जी ने विशेष सफलता प्राप्त की है । ''भट्टजी का रचना काल 1921,22 में असहयोग आन्दोलन के समय के दो राजनैतिक एकांकियों 'असहयोग और स्वराज्य' तथा 'चित्तरंजन दास' से होता है । वैसे वास्तविक नाटक लिखने का क्रम 1929 में शुरु होता है ।

भट्ट जी आल इंडिया रेडियो से संबंध रहे हैं । उन्होंने रेडिया नाटक के शिल्प का अध्ययन निकट से किया है और समय-समय पर इसका विवेचन भी किया है । भट्ट जी ने रेडियो नाटक के स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकार किया है । उन्होंने मुख्यतः रंगमंच को ध्यान में रखकर ही नाटकों की रचना की है । दिल्ली रेडियो में नाटक विभाग के परामर्शदाता के नाते उन्होंने अनुभव किया कि वे कलाकार, जो पात्रों की अंगिक गति को प्रधानता

देकर नाटक-निर्माण करते हैं, रेडियो पर असफल सिद्ध हुए हैं । इन्होंने पचास से भी अधिक एकांकी नाटकों की रचना की है । इनके कहानी संग्रह है - 'अभिनव एकांकी नाटक', 'स्त्री का हृदय', 'तीन नाटक', 'ससस्या का अंत', 'धूमाशिखा', 'अन्धकार और प्रकाश', 'आदिम युग', 'पर्दे के पीछे' और 'आज का आदमी' ।

30A.3. कथानक

मध्यवर्गीय परिवार में अचानक अनजान मेहमानों के आने के कारण क्या-क्या होता है, इसका अत्यंत सजीव चित्रण प्रस्तुत एकांकी में मिलता है ।

विश्वनाथ अपने परिवार के साथ, एक छोटे से घर में रहता है । इस घर को लगकर एक छत भी है । लेकिन इस छत का कोई उपयोग नहीं करता, कारण वह छत पडोसियों की है । गर्मी का मौसम है । घर में बहुत उमस है । रेवती (विश्वनाथ की पत्नी) को गर्मी के कारण भयानक सिर दर्द हो रहा है । इतनी तेज गर्मी है कि पंखे से की जानेवाली हवा तक गर्म है । पानी पीने से भी ठंडक मिलती नहीं । घर की इतनी बड़ी समस्या है कि विश्वनाथ दो साल से एक अच्छे घर की तलाश में है, पर नहीं पा-पा रहा है । घर इतना तंग है कि दो बच्चों को लेकर सोना भी इस गरमी में संभव नहीं है । इस गरमी में बच्चों का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता । दोनों पति-पत्नी अपनी घरेलू समस्याओं से परेशान भी है और चिंतित भी ! इसी बीच दो व्यक्ति नन्हेमल और बाबूलाल आगुन्तक बनकर विश्वानाथ के घर आ जाते हैं ।

विश्वनाथ और नन्हेमल गरमी से इतने परेशान है कि अपना पूरा परिचय दियें बिना ही विश्वानाथ के घर के मेहमान बन जाते हैं । बरफवाला ठंडा पानी पीकर तृप्त होते हैं और स्थानादि से अपनी यात्रा की थकान को दूर कर आराम करना चाहते हैं । नन्हेमल और बाबूलाल अपने में ही इतने अधिक उलझे हुए हैं कि

बीच-बीच में विश्वानाथ के पूछने पर संपतराम का नाम बता देते हैं, उसके स्थान, कारोबार आदि के बारे में बताते हैं । पर संपतराम को विश्वनाथ की बहुत प्रशंसा करता है । इसी प्रकार वह बताता रहता है । पर बात हमेशा लीक से हटती है और कुछ अन्य विषय में उलझ जाती है । इसलिए विश्वानाथ की समझ में यही नहीं आता कि आखिर ये लोग कौन हैं और कहाँ से आये हैं ?

घर में रेवती बच्चे तक इन आगन्तुकों के आने से थोडे परेशान है । गर्मी की वजह से पहले ही परेशान रेवती और विश्वानाथ के लिए ये 'नये मेहमान' का समस्या ही बन जाते हैं । विश्वानाथ रेवती के सिर दर्द को लेकर चिंतित है । वह इस वक्त यही चाहता था कि रेवती को थोड़ा आराम मिले । उसने वैसे भी कुछ सुख नहीं दिया है ।

स्नानादि के बाद मेहमानों को भोजन भी तो देना है और रेवती इस स्थिति में नहीं कि इस गरमी में चुल्हे के पास बैठें रोटियाँ सेंक सके । वह विश्वनाथ पर अपना सात्विक क्रोध व्यक्त करती है ।

ये नये मेहमान बिजनौर से आये है । कुछ बीस साल पहले विश्वनाथ बिजनौर अवश्य गया था । सम्पतराम, जिनका ये लोग परिचय देते हैं, इस नाम के किसी व्यक्ति को विश्वानाथ नहीं जानता । पर बार-बार उसका जिक्र करने से विश्वनाथ को लगता है कि संभवतः इस नाम का उनका कोई साहित्यिक मित्र होगा, जिसने उनको यहाँ भेज दिया हो । पर अभी उन्हें कुछ निश्चित मालूम नहीं है ।

इसी बीच नये मेहमान एक और समस्या निर्माण करते हैं दूसरी छत पर हाथ धोते हैं, और छत पर पानी फैल जाता है । पड़ोसी पहले से ही झगडालू है, वह इस बात से चिढ़ जाता और दो-चार खरी-खोटी भी सुनाकर चला जाता है ।

मेहमान यह जान तो जाते हैं कि उनके इस प्रकार अचानक आ जाने से विश्वनाथ तथा उसके परिवार को कष्ट पहुँचा है, पर वह भी कुछ कर नहीं पाते । जब वह सोने की तैयारी करने लगते हैं तब विश्वनाथ उनसे पूछता है कि वे कहाँ से आये है ? संपतराम कौन है ? जगदीश प्रसाद क्या काम करते हैं ? आदि ? जब वे पूरी जानकारी देने लगते हैं तो विश्वनाथ पूछते हैं कि 'आप कोई चिट्टी-विट्टी लाये है ?'' उन्होंने चिट्टी तो नहीं लायी, पर उनको बताया गया था कि स्टेशन से उतरकर सीधे रेलवे रोड चले आना । वहाँ कृष्ण गली में वह रहते हैं ।

पर यहाँ कृष्ण गलो नाम से छं मलियाँ हैं । कौन-सी गली वह भी नहीं जानते हैं और जिनके पास जाना है । उनका नाम भी ठीक-ठीक याद नहीं । बस कवि, कविराज इतना ही मालूम है, और शायद वह वैद्य है यह बता देते हैं । विश्वनाथ कवि है, पर वैद्यकी नहीं करते । अतः ये इनके मेहमान नहीं है । विश्वनाथ का बेटा प्रमोद बताता है कि 'पिछली गली में एक कविराज वैद्य' रहते है तो तुरंत विश्वानाथ उन्हें पूछ लेता है 'कहीं आप कविराज रामलाल वैद्य के यहाँ तो नहीं आये हैं ?' और शायद वे वहीं के हैं ।

आखिर नये मेहमान को उनका सही ठिकाना मालूम हो जाता है और वे प्रमोद के साथ उस मकान में जले जाते हैं जहाँ 'कविराज रामलाल वैद्य' रहते हैं । केवल ठीक नाम, पता मालूम न होने के कारण इतनी सारी समस्या निर्माण होती है ।

रेवती का सिर अभी भी दर्द कर रहा है । वह थोड़ी सी स्वस्थ होती है कि चलो बला टली कि तभी रेवती का भाई मेहमान बनकर आया है । चार घंटे से घर खोजता वह अब जाकर पहुँचा है । भाई के आने के कारण एक उल्लास रेवती के चेहरे पर है । वह पंखा झलती है, बरफवाला पानी लाती है और हलवाई की दुकान से मिठाई लाने का आदेश भी देती है । भाई के आने से

वह इतनी खुश है कि उसका सर दर्द भी लगभग खतम हो चुका है ।

विश्वनाथ रेवती के इस बदले तेवर और मूड़ को देखता है और सप्रश्न उसकी ओर देखकर पूछता है "अब ? तुम्हारा सिर दर्द ?" तब वह उत्तर देती है कि इस मेहमान की मेहमान-नवाज़ी में जहाँ कर्तव्य है वहीं प्रेम भी है और अपनत्व भी और फिर पूरियाँ तलने के लिए बैठ जाती है ।

इस प्रकार पस्तुत एकांकी अपने और अनजान मेहमानों के प्रति मनुष्य की सहज स्वाभाविक भावना को अभिव्यक्त किया है ।

30A.4. समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी मध्यवर्गीय परिवार की प्रवृत्ति उनकी मानसिकता तथा उनके जीवन की ओर संकेत करता है । मध्यवर्गीय परिवार के विश्वनाथ और रेवती अत्यधिक गरमी, सिर दर्द, तंग-मकान होने के बावजूद घर आये मेहमान का उचित अतिथि सत्कार करते हैं । हमारी संस्कृति में 'अतिथि देवोभव' कहा जाता है । यहाँ उसका पालन होता हुआ सा दिखाई पड़ता है । विश्वनाथ नये मेहमानों को पानी (बरफवाला) पिलाता है, स्नान आदि करने की अनुमति देता है । वस्त्रादि धोन की इज़ाजत भी देता है । इतना ही नहीं उनके भोजन की व्यवस्था करने के लिए, रेवती से अनुनय भी करता है, जबकि अभी तक उसे यह तक मालूम नहीं है कि ये नये मेहमान कहाँ से आये हैं ? किसने इन्हें यहाँ भेजा है ? वह उनकी बातें और बर्ताव बडे सहिष्णु यजमान की तरह देखता जाता है । बाबूलाल और नन्हेमल को जब अपने सही मकान में पहुँचता है तब रेवती और विश्वानाथ राहत की साँस लेते हैं । रेवती का अपने सिर-दर्द के कारण मेहमानों के लिए भोजन बनाने का बिलकुल मन नहीं था, वह इस खातिर शिकायत भी करती है । पर वहीं जब इन मेहमानों के चले जाने के बाद उसका भाई आता तो उसकी मेहमान-नवाज़ी में वह अपना

सिर-दर्द, गर्मी की शिकायत भूल जाती है । लेखक इस एकांकी द्वारा यह भी बताते हैं कि अपने प्रिय के लिए कोई भी कष्ट उठा सकने में आनंद का अनुभव ही करता है, पर अनजान व्यक्ति के लिए दिल से, मन से वह कुछ कर नहीं सकता ।

30A.5. पात्र / चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में प्रमख दो पात्र है - 1.विश्वनाथ, 2.रेवती, बाबूलाल नन्हेमल, किरण, प्रमोद तथा पड़ोसी आदि पात्र सहायक पात्र के रूप में आते हैं । इस एकांकी में विश्वनाथ और रेवती का चरित्र ही विशेष रूप से आकार लेता है । अतः उनका चरित्र-चित्रण निम्नलिखित हैं -

30A.5.1. विश्वनाथ

विश्वनाथ मध्यवर्गीय परिवार से संबंधित सुशिक्षित और सुसंस्कृत व्यक्ति है । वह पिछले दो वर्षों से अपने परिवार को एक अच्छे मकान में रखने की इच्छा रखता है, पर महानगरों की आवास की समस्या उसे ऐसा अवसर नहीं देती । अतः वह एक छोटे से घर में अपनी पत्नी रेवती तथा अपने बच्चे किरण और प्रमोद के साथ रहता है । गर्मी में इस तंग मकान में प्राण निकलने को होते है । एक क्षण भी चैन नहीं मिलता । पडोस भी अच्छा नहीं है । गर्मी की वजह से बच्चे भी बीमार रहते हैं । इन सारी तकलीफों को वह समझता है, अपने परिवार के कष्टों से परिचित हैं, पर कुछ नहीं कर सकता, उसकी यह व्यथा इस प्रकार अभिव्यक्त होती है "क्या बताऊँ, जीवन में तुम्हें कोई सुख न दे सका ।"

विश्वनाथ कवि है । साहित्यिक गोष्ठियों आदि में वह यहाँ वहाँ जाजा रहता है । उसके कुछ साहित्यिक मित्र है । उसका परिवार शांति-प्रिय है । झगड़ना लड़ना ना तो उसे भाता है न

उसके परिवार को भी । इसलिए पड़ोस की लाला की पत्नी आकर जब लड़ने लगती है तो वह संयतस्वर में बोलता रहता है ।

बाबूलाल और नन्हेमल अचानक उसके घर में मेहमान बनकर आते हैं तो वह बड़ी सहिष्णुता के साथ उनका अतिथेय करता है । अतिथि सत्कार में कोई कमी नहीं आने देता । हालाँकि पत्नी थोड़ा विरोध भी दर्शाती है । तब वह उसे कहता है "खाना तो बनाना ही पड़ेगा, कोई भी हों, जब आये हैं तो खाना खाँएगे, थोड़ा सा बना लो ।"

विश्वनाथ में अतिथेय-भाव इतना है कि आनेवालों को दुख न पहुँचे इसलिए सीधे सीधे यह नहीं पूछता कि वे कौन है ? कहाँ से आये हैं ? किसने भेजा है ? अपितु यही सवाल वह बिलकुल समय की नज़ाकत को देखकर करता है । किन्तु इसी बीच वह उन्हें बरफवाला पानी ला देता है । स्नान करने के लिए अनुमति देता है । कपडे धोकर सुखाने के लिए कहता है और फिर भोजन की व्यवस्था भी करने के लिए तत्पर हो जाता है । किंतु बाद में जब यह स्पष्ट हो जाता है कि आये हुए आगन्तुक किसी कविराज रामलाल वैद्य के पास आये हैं जो कृष्णगली में रहते हैं, तो अपने बच्चे को उनके साथ भेजकर मकान दिखा आने की आज्ञा देते है । इस प्रकार विश्वनाथ का आचरण, व्यवहार बिलकुल मध्यवर्गीय है ।

30A.5.2. रेवती

विश्वनाथ की पत्नी रेवती, घर में रहनेवाली और अपने परिवार की देखभाल करनेवाली एक सीधी-सादी महिला है । वह गर्मी तथा तंग मकान और सिरदर्द से इतनी परेशान है कि उसकी हर बात में उसका वह दर्द उठता हुआ सा जान पड़ता है । विश्वनाथ की पत्नी अपने बच्चों की बहुत चिंता भी करती है । करुण के तपते शरीर के कारण वह चिंतित हो जाती है कि कहीं यह गर्मी बच्चों को बीमार तो न बना दे । उस छोटे से तंग मकान

में उसका जी घुटता है, पर वह अपने इन स्थितियों से समझौता कर गयी है । बस उसकी एक इच्छा है कि इस गर्मी में कोई मेहमान न आ जाय ।

वह अपने परिवार के सदस्यों की विशेष चिंता करती है, इसलिए गर्मी से राहत मिलने के लि वह खुद नीचे सो जाना चाहती है और पति को छत् पर सो जाने के लिए कहती है ताकि गर्मी से परेशान न हो । दूसरे प्रसंग में वह बच्चों के प्रति भी काफी चिंतित दिखाई देती है, वह कहती है "वैसे भी मैं उसकी छत पर बच्चों का अकेला साना पसंद नहीं करुँगी । बड़ी डायन औरत है । उसके बाल बच्चे तो है नहीं, कहीं कुछ कर दें तब ?

रेवती के चरित्र की यह विशेषता है कि वह अपनों के लिए कुछ भी करने को तैयार है । अपनों के लिए तकलीफ सहने में आनंद का अनुभव ही होता है । जब 'नये मेहमान' आ जाते हैं और उनके लिए खाना बनाने की बात उठती है तो वह शिकायत भरे स्वर में कहती है कि "अब क्या खाना भी बनाना पड़ेगा ?" बार-बार वह अपने पति से यह जानना चाहती है कि ये लोग हैं कौन और कहाँ से आये हैं ? और जब विश्वनाथ एकदम सीधे-सीधे बात नहीं कर पाता तो थोड़ा खिझकर ही उससे बात करती हैं और अपने सिदर्द की शिकायत करती रहती है । किंतु जब उसका भाई ही उसी दिन बाबूलाल और नन्हेमल के चले जाने के तुरंत बाद आता है तो उसका रुख ही बदल जाता है । हर्षित होकर वह उसकी आवभगत में लग जाती है । इतना ही नहीं वह अपना सिरदर्द भूलकर भोजन का प्रबंध करने के लिए तत्पर हो जाती है । विश्वनाथ जब उसे चिढ़ाता सा उसके सिरदर्द के बारे में पूछता है तो वह कहती हैं "यहाँ कर्त्तव्य के साथ प्रेम भी है ।"

इस प्रकार उदयशंकर भट्ट जी ने रेवती के द्वारा मध्यवर्गीय स्त्री के चरित्र को स्पष्ट किया है ।

30A.6. संवाद

प्रस्तुत एकांकी के संवाद प्रवाहमयी, संक्षिप्त, छोटे चूस्त तथा कथा की गति में सहायक है । अत्यंत सरल और सीधी भाषा में कहे गये संवाद पाठकों के कौतुहल को बढ़ाते हैं । 'नये मेहमान' आखिर विश्वनाथ के घर क्यों आये हैं और उनको किसने भेजा है, वह जानने को हर कोई उत्सुक होता है । इस उत्सुकता को जिज्ञासा को लेखक ने संवाद-योजना द्वारा बरकरार रखा है । विश्वनाथ और रेवती, बाबूलाल और नन्हेमल के संवाद में एक विशेष अंतर यह है कि दोनों का स्तर-वर्ग भिन्न है । इसे सूचित करने के लिए एकांकीकार ने छोटे-छोटे प्रसंग लिए हैं जिससे कथा में जिज्ञासा कायम बनी रहती है जैसे -

विश्वनाथ : क्षमा कीजियेगा, आप कहाँ से पधारे हैं ?

नन्हेमल : अरे ! आप नहीं जानते वह लाला संपतराम है न गोटेवाले, वह मेरे चचेरे भाई हैं । क्या बताएँ साहब, उन बेचारों का कारबार सब चौपट हो गया, हम लोगों के देखते-देखते वह लाखों के आदमी खाक में मिल गये । बाबू यह मेरी बंडी संडूक में रख दो ।

विश्वनाथ : कौन संपतराम ?

बाबूलाल : अरे, वही गोटे वाले, लाओ न, चाचा, माल मसाला तो अंटी में है न ?

नन्हेमल : जेब में है, बंडी की जेब में, अब डर की क्या बात है ? घर ही है । जरा बीड़ी का बण्डल मेरी जेब से निकाल ।

बाबूलाल : बीडी तो मेरे पास भी है, लो । ज्रा भाई दियासलाई ले आना ।

30A.7. भाषा-शैली

प्रस्तुत एकांकी की भाषा पात्रानुरूप तथा प्रसंगानुकूल है । लेखक ने प्रवाही शैली में अपनी बात पात्रों के माध्यम से कही है ।

वर्गीय स्तर उनके पात्रों की भाषा से ही अभिव्यक्त होता है । मध्यवर्गीय परिवार में नौकरी, छुट्टी, मकान, गर्मी में किसी हिल स्टेशन जाना आदि बाते विश्वनाथ और रेवती के संवादों में सहज आने के कारण, पात्र जीवंत हो उठे है । भाषा मार्मिक तथा रोचक होने के कारण एकांकी प्रभावी बना है ।

30A.8. उद्देश्य

भट्ट जी का सामाजिक यथार्थ पर अधिक ध्यान रहने के कारण इन्होंने व्यक्तियों से अधिक वर्ग-प्रतिनिध्यियों को चित्रित किया है । अतः प्रस्तुत एकांकी में महानगरों में मेहमानों के आने से मध्यवर्गीय लोगों को होनेवाली कठिनाइयों का चित्रण है । प्रस्तुत एकांकी के सभी पात्र स्वाभाविक आकर्षक रूप में आये हैं । कहीं-कहीं व्यक्तियों के चित्र भी सुन्दर बन पड़े है । संलाप सब जगह वातावरण और पात्रों के अनुरूप हैं । अधिकतर संवाद छोटे ही है । अतः उनमें पर्याप्त शक्ति भी है । इस प्रकार नाटक के उद्देश्य को वहन करने में समर्थ एवं है ।

30A.9. बोध प्रश्न

1. एकाँकीकार भट्ट जी ने 'नए मेहमान' के बारे में क्या संदेश दिया है ? इसकी विवेचना कीजिए ।

NOTES

इकाई तीस -बी : प्रतिशोध - रामकुमार वर्मा

इकाई की रूपरेखा

30B.0. उद्देश्य

30B.1. प्रस्तावना

30B.2. लेखक परिचय

30B.3. कथानक

30B.4. समीक्षा

30B.5. रंग संकेत

30B.6. पात्र / चरित्र-चित्रण

- 30B.6.1. भारवि
- 30B.6.2. श्रीधर

30B.7. संवाद (कथोपकथन)

30B.8. भाषा - शैली

30B.9. उद्देश्य

30B.10. बोध प्रश्न

30B.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने उदयशंकर भट्ट जी विरचित 'नये मेहमान' एकाँकी में मध्यम वर्ग की स्थिति के बारे सविस्तार जानकारी प्राप्त कर लीं ।

30B.1. प्रस्तावना

अब आप इस इकाई में डॉ.वर्मा जो एकाँकी के अग्रगण्य लेखक है, उसके बारे में अध्ययन करेंगे । इसके अलावा बेटे ने बाप पर किस प्रकार प्रतिशोध लेने में तत्पर हो रहा है, इसकी जानकारी मिलेगी ।

30B.2. लेखक परिचय

डॉ.रामकुमार वर्मा हिंदी में आधुनिक एकांकी की प्रतिष्ठा करानेवाले अग्रणी लेखकों में हैं । उन्होंने एकांकी के सैद्धांतिक विवेचन एवं व्यावहारिक सृजन द्वारा हिंदी एकांकी के शिल्पगत विकास में महत्वपूर्ण योग दिया है ।

वर्मा जी ने एकांकी में विभिनन विषयों को स्पर्श किया है । इनके कथानक विभिन्न क्षेत्रों से लिए गए हैं । पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक आदि सब प्रकार के प्रसंगों पर एकांकी लिखे हैं । कहीं सत्यों की अभिव्यक्ति है, तो कहीं सामाजिक असंगतियों पर व्यंग्य किया गया हे, और कहीं जीवन की हल्की-फुल्की स्थितियों के मनोरंजक चित्र उपस्थित लिए गए है । इनके एकांकी संग्रह इस प्रकार हैं - रेशमी टाई, चारुमित्रा, विभूति, सप्तकिरण, रुपरंग, रजत-रश्मि, दीपदान, ऋतुराज, रिमझिम, इन्द्रधनुष और पांचजन्य कौमुदी-महोत्सव, ध्रुवतारिका आदि ।

डॉ.रामकुमार वर्मा ने अनेक पौराणिक एवं ऐतिहासिक नाटकों कीं भी रचना की हे । प्रतिशोध संस्कृत के प्रसिद्ध महाकवि भारवि के जीवन के नाटकीय प्रसंग पर आधारित है ।

30B.3. कथानक

प्रस्तुत एकांकी महाकवि भारवि के जीवन के एक प्रसंग पर आधारित है । धार नगरी में रहनेवाले पति-पत्नी श्रीधर और सुशिला के मध्य संवाद से एकांकी का प्रारंभ होता है । श्रीधर अपनी पत्नी सुशीला को उपनिषद के श्लोक का अर्थ समझा रहे हैं, पर पत्नी का उस ओर ध्यान नहीं है । श्रीधर उसे श्लोक का अर्थ समझाते रहते हैं कि वह चिंतित स्वर में पूछती है कि "भारवि अभी तक क्यों नहीं आया ?

दो दिन से भारवि घर नहीं लौटा है । इसलिए माता को विशेष चिंता हो रही है । वह बार-बार भारवि की ही चिंता करती है । श्रीधर खीझकर उसे कहता है कि भारवि इतना छोटा नहीं कि उसके भोजन आदि कि चिंता की जाय, वह तो एक बड़ा कवि है, कहीं किसी कवि सम्मेलन में रम गया होगा । फिर धारानगरी में भी ऐसे अनेक आकर्षणीय स्थान हैं कि जहाँ कवि अपने भाव को खोज सकते हैं । श्रीधर की इन बातों से पत्नी थोडी विहवल होती है । अपने पुत्र के प्रेम के कारण वह उसे पूछ ही लेती है कि एक पिता अपने पुत्र के लिए इतना निष्ठुर कैसे हो सकता है ? कहीं पिता ने ही अपने पुत्र को धर से निकाल तो नहीं दिया ! इस वार्तालाप से ही यह बात ज्ञात होती है कि भारवि एक अत्यंत ज्ञानी व्यक्ति है । उसने शास्त्रार्थ में अनेकम पंडितों को पराजित किया है । किंतु पंडितों की हार से उसमें अहंकार बढता गया । उसे विद्वता का घमंड हो गया है । अपने पुत्र का अहंकारी तथा दम्भी होना पिता सहन नहीं कर पाये तो उन्होंने उसकी ताड़ना की । सभी पंडितों के सामने पिता अपने पुत्र भारवि को महामुर्ख, दंभी तथा अज्ञानी कहते हैं । जिसे सुनकर अन्य पंडित भारवि का ताली पीटकर परिहास करते हैं । पुत्र ने अपने पिता की ओर व्यथित-दृष्टि से देखा, ग्लानि से अपना मुख छिपा लिया और एक ओर चुपचाप चला जाता है । भारवि जो गया है, वह घर लौट ही नहीं है ।

श्रीधर से यह सारा पृतान्त सुशीला सुन लेती हैं और उसका मन चिंतित हो उठता है । वह सोचती है कि वह कहाँ गया होगा "अपने ससुराल ?" या फिर कहीं उसने आत्महत्या तो नहीं की होगी ? या फिर देशान्तर ? लेकिन इन तीनों में से वह कुछ नहीं कर सकता कारण वह पिता के अनुशासन के बिना न तो ससुराल जा सकता है और ना ही देशांतर जा सकता है । और वह इतना पतित नहीं कि आत्महत्या कर सके ।

सुशीला फिर भारवि को लेकर इतनी चिंतित हो जाती है कि आभा (सेविका) को उसे खोजने के लिए भेज देती है । भारवि के घर न लौटने की चिंता से वह इतनी अशांत है कि उसने भोजन तक नहीं किया है । वह सोचने लगती है कि भारवि कहाँ-कहाँ हो सकता है ? ताकि उसे ढूँढकर लाया जा सके ।

सुशीला की चिंता को देखकर श्रीधर उसे कहते हैं कि अगर वह कहीं मिला तो वह किसी जनपद में अवश्य होगा । यदि वह वहाँ भी न मिला तो वे राजकीय सहायता लेकर भारवि को ढूँढ निकालने का आश्वासन देते हैं । सुशीला अधीर हो उठती है तब वे उसे सचन देते हुए कहते हैं "मैं तुम्हें वचन दे चुका हूँ कि तुम्हारा भारवि कल तुम्हारे पास होगा !" श्रीधर को लगा था कि भारवि शीघ्र लौटेगा पर ऐसा नहीं हुआ तो उन्हें लगता है कि "अब मर्यादा की सीमा समाप्त हो गई है । कल मैं जाऊँगा । हम उसकी पत्नी के प्रति भी तो उत्तरदायी हैं और वह यहाँ नहीं है ।"

इसी बीच भारती नामक एक स्त्री जो भारवि के ज्ञान से अत्यंत प्रथावित है आ जाती है । वह भारवि शास्त्रार्थ मिमांसा की प्रशंसा करती है । वह एक बार भारवि के दर्शन करना चाहती है । वह स्त्री श्रीधर और सुशीला को बता देती है कि उसने आत प्रातः कल भारवि को मालिनी के तट पर ध्या-मन्न ग्नहकर वीणापाणि भारती की उपासना करते हुए देखा था । फिर उसके बाद वे कहाँ गए उसे ज्ञात नहीं है ।

श्रीधर और सुशीला भारवि की सोच में ही डूबे हैं । श्रीधर सुशीला को धैर्य देता है । भारवि को लौटा लाने का वचन देता है । पर माँ की ममता उसे सोने नहीं देती । किंतु श्रीधर उसे विश्वात्मा का स्मरण करने कहता है और इलाक पढ़ता है । उनके साथ वह भी पाठक करती है । तभी उसे शांत रात्रि में कहीं खटका सुनकर उसकी तंद्रा भंग होती है और उसे लगता है कि भारवि ही आया होगा । वह इतनी अशांत और अधीर हो उठती है कि श्रीधर को उसकी यह दशा देखकर दुख होता है और वे उसी समय भारवि को खोज लाने के लिए तत्पर हो उठते है । वे भी भावुक हो उठते हें और कहते हैं कि संसार में उसका पुत्र सर्वश्रेष्ठ महाकवि है । दूर-दूर देशों में उसकी समानता करने का किसी को साहस नहीं है । वह शास्त्रार्थ में बड़े से बड़े पंडितों को पराजित कर चुका है । उसका पाण्डिण्य देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता होती है । किंतु मेरे भारवि के मन में धीरे-धीरे अहंकार स्थान पाता जा रहा है । मैं चाहता हूँ कि भारवि और भी अधिक पंडित और महाकवि बने । पर अहंकार उन्नति का बाधक है । मैं उस अहंकार पर अंकुश रखना चाहता हूँ । जिसे अपने पाण्डित्य का अभिमान हो जाता है वह अधिक उन्नति नहीं कर सकता । यही कारण है कि मैं समय-समय पर उसे मुर्ख और अज्ञाना कहता हूँ । प्रशंसा तो सभी करते हैं किंतु अधिकारी से निन्दा भी होनी चाहिए । मैं नहीं चाहता कि अहंकार के कारण मेरे पुत्र की उन्नति रुक जाय ।''

सुशील को अपने पति की बात से पता चलता है कि वे अपने पुत्र से कितना प्रेम करते हैं । तभी अपने हाथ में तलवार लेकर भारवि ग्लानि से पछताता पिता के सामने आता है और कहता है, ''सचमुच ही मैं मूर्ख हूँ ; विकल बुद्धि हूँ । और यह तभी प्रमाणित होगा जब आप मेरा मस्तक तलवार से काट दो ।'' वह इतना विहवल और ग्लानियुक्त है कि उपर्युक्त पिता की बातों से वह अपने आप को लांछित करने लगता है । वह कहता है कि वास्तव में वह पिता की ताड़ना से लांछना से हमेशा दुखी हुआ

है । इसलिए उसे लगा था कि जब तक पिता जीवित रहेंगे तब तक वह इसी प्रकार लांछित होता रहेगा । वह आत्महत्या नहीं कर सकता था इसलिए पिता का जीवन ही समाप्त करने के निश्चय से वह अपने हाथ में तलवार लेकर आया है, पिता से परिशोध लेने के लिए । किंतु जब उसने पिता की बातें सुनी और माता के हृदय की दशा को देखा तो उसके हदय पर जैसे वज्रपात ही हुआ और ग्लाति से भर उठा इसलिए पिता के सामने नतमस्तक होकर कहता है "पितृहत्या से प्रतिशोध लेने वाला यह नारकीय पुत्र प्रायश्चित रूप में अपना मस्तक कटवाने की भिक्षा माँगता है ।" पिता पुत्र को क्षम करते है । किंतु पुत्र प्रायश्चित चाहता है । पिता उसे जीवन-दान देते हैं । पर दण्ड स्वरूप मिला जीवन भी भारवि को स्वीकार नहीं, कारण, "मैं जीवन को दण्ड नहीं समझना चाहता । यह ब्रह्म की विभूति है । इसे चिंता में घुलाना, पाप में लपेटना, दुःख में बिलखाना सबसे बड़ा अपराध है ।" वह पिता से अनुननय करता है वे उसे शास्त्रानुसार दण्ड दें । भारवि के कहने पर पिता उसे दण्ड देते हैं । "छः मास तक श्वसुरालय में जाकर सेवा करना और जूठे भोजन पर अपना पोषण करना ।" पिता की आज्ञा के साथ ही वह प्रायश्चित प्रारंभ करता है और माता जो उसे अपने हाथों से खिलाना चाहतह है उसे वह जूठा भोजन लाने को कहता है । माँ के खिलाकर । पिता की आज्ञा लेकर स्वसूरालय प्रस्थान करता है । माँ उसे देखती भर जाती है ।

30B.4. समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी प्रस्तुत एकांकी संस्कृत के प्रसिद्ध महाकवि भारवि के जीवन-प्रसंग पर आधारित है । नाटककार ने बड़ी कुशलता से भारवि एवं उनपके पिता का चित्रण किया है । इस एकांकी के द्वारा लेखक तत्कालीन सांस्कृतिक परिदृश्य भी उपस्थित करते हैं । शास्त्रार्थ में कवि सम्मेलनों का आयोजन आदि तत्कलीन वीप्रवर्ग में एक विशिष्ट बात थी । अतः श्रीधर के परिवार

में सुशीला भी वेदों का पाठ करती है । शीधर और भारवि भी पंडितों के बीच शास्त्रार्थ भी करते हैं ।

प्रस्तुत एकांकी में चित्रित जनपदीय कथा कुछ आदर्शों को प्रास्थापित करती है । जैसे पिता अपने पुत्र को सद्मार्ग पर लाने के लिए उसकी ताड़ना करते हैं या उसे लांछित करते हैं, माता पुत्र की चिंता में भूखी, दुखी रहती है, पुत्र सच्चाई के पता चलने पर प्रायश्चित के लिए तत्पर हो उठता है । प्रस्तुत एकांकी पुत्र-प्रेम वात्सल्य तथा पिट-सम्मान को व्यक्त करता है । इसके साथ ही इसका मूल स्वर महाकवि भारवि के इस संवाद से चित्रित होता है, अहंकार उन्नति का बाधक है । मैं उस अहंकार पर अंकुश रखना चाहता हूँ । जिसे अपने पांडित्य का अभिमान हो जाता है वह अधिक उन्नति नहीं कर सकता । यही कारण है कि मैं समय-समय पर उसे मूर्ख और अज्ञाना कहता हूँ ।'' अहंकार से मुक्ति और बुद्धि की गरिमा से उन्नति करना यही प्रस्तुत एकांकी का आदर्श है, जिसे रामकुमार वर्मा ने भारवि के जीवन से चित्रित किया है ।

शीर्षक की सार्थकता : प्रस्तुत एकांकी के प्रारंभ में सुशीला के संवादों से ऐसा लगता है कि पिता अपने पुत्र के सम्मान और उन्नति से प्रसन्न नहीं है इसलिए बार-बार पंडितों के मध्य शास्त्रार्थ के दौरान उसका अपमान करते हैं शायद यही एक तरह का प्रतिशोध हो । दूसरी ओर अपने पिता के कठोर वचनों से पीडित लांछित भारवि भी यही सोचता है कि जब तक उसके पिता जीवित रहेंगे तब तक वे उसका इसी तरह अपमान करते रहेंगे । वे उसकी खति से खुश नहीं है । अगर अपने पिता के जीवन को समाप्त कर प्रतिशोध लिया जाय तो उसके मार्ग की बाधा दूर हो जायेगी । किंतु यह प्रतिशोध इतना भ्रांतिजनक है कि सच्चाई खुल जाने से प्रतिशोध का काल मेध हट जाता है और प्रायश्चित से व्यक्तित्व का विकास होता हुआ दिखाई देता है । इस आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रस्तुत एकांकी के लिए नाटककार द्वारा दिया गया शीर्षक सार्थक है । 'प्रतिशोध' का भ्रम मात्र है, वह

एकांकी की कथा का मूल उद्देश्य नहीं है । यह एक मनोवेग है जो भारवि को लेखनी त्यागकर तलवार उठाने को उद्यत करता है, किंतु पिता का पुत्र-प्रेम उसकी सदायशयता पुत्र को प्रायश्चित के लिए विवश करती है ।

30B.5. रंग संकेत

प्रस्तुत नाटक प्रसिद्ध-व्यक्ति महाकवि भारवि के. जीवन पर आधारित है । ऐसे नाटकों में यह खतरा अवश्य रहता है कि नाटककार जीवन की घटनाओं के विस्तार में न चला जाय । किंतु डॉ.वर्मा इस विस्तार दोष से बचते है । हमेशा अपने को नियंत्रित रखते हैं । इस एकांकी में उन्होंने प्रसंग के नाटकीय क्षणों का पकडा है और उसी में अपेक्षित घटनाओं को केन्द्रित किया है । संकलन-त्रय का निर्वाह करने के लिए, नाटक को एक ही स्थान और एक ही समय में समाप्त किया है । प्रस्तुत एकांकी में संपूर्ण घटना एक ही दृश्य में समाप्त होती है । एक ही बिंदु पर घटनाओं को केन्द्रत करने के कारण जहाँ एक ओर एकांकी में सघनता आयी, है । वहीं दूसरी ओर इतिहास के दायित्व का निर्वाह करने के लिए सूचनाएँ भी दी गई हैं । ऐसे स्थलों पर लेखक ने यह ध्यान रखा है कि इन्हें कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया जाय ।

30B.6. पात्र / चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत एकांकी में कुल पाँच पात्र है - 1.श्रीधर, 2.सुशीला, 3.भारवि, 4.भारती, 5.आभा । इनमें से प्रमुख पात्र हैं 1श्रीधर, 2.भारवि । अन्य पात्र इन दोनों पात्रों के चरित्र चित्रण में सहायक बनकर आते हैं । प्ररतुत एकांकी चरित्रात्मक ही अधिक होने के कारण भारवि और श्रीधर चरित्र नायक बनकर सम्मुख आते है । उनका चरित्र-चित्रण निम्नलिखित है ।

30B.6.1. भारवि

धारानगर में रहनेवाला भारवि संस्कृत का महान पंडित कवि

हैं । वेदों, उपनिषदों में उनकी गहरी पैठ है । अतः वह शास्त्रार्थ में बड़े-बड़े पंडितों को हरा देता है । श्रीधर तथा सुशीला का अपने पुत्र से विशेष स्नेह एवं प्रेम है । माता सुशीला पुत्र-प्रेम से ओत-प्रोत है । पिता श्रीधर भारवि के ज्ञान तथा विद्या से बड़े प्रसन्न रहते हैं । वे उसे संसार का जनक कहते हैं । ''अपनी कल्पना से वह न जाने कितने संसार के समूहों का कल्याण कर सकता है ।'' उनकी इस उक्ति में पुत्र के प्रति अभिमान लक्षित होता है ।

धारानगरी में जब सारे पंडितों को भारवि अपने ज्ञान से परास्त करने लगा तब उसमें दंभ, अभिमान तथा गर्व का भाव बढ़ने लगा । उसमें जब दंभ आने लगा तब अहं भी बढ़ने लगा । इसलिए जब उसके पिता ने पंडितों के सम्मुख ही उसे मूर्ख, अज्ञाना कहकर उसको लांछित किया तब वह अपमानित हो गया । वास्तव में इसके पूर्व भी पिता ने कभी उसकी ताड़ना की हो तो वह धर वापस आ जाता था । पर इस बार पिता के लाछन से इतना अपमानित अनुभव करता है कि घर ही नहीं लौटता । दो दिन तक यह सोच विचार करता रहा जितना सोचता उतना ही उसका क्रोध अपने पिता पर भड़क उठमा । और अंत में अपना महत्व बनाये रखने के लिए वह पिता से परिशोध लेने की ठान लेता है । वह सोचता है कि जबतक उसके पिता रहेंगे वह इसी प्रकार लांछित होता रहेगा और अपमान का अनुभव करता रहेगा । जब उनका ही जीवन समाप्त करने की उसने ठान ली । वह स्वयं अपने करने के लिए. तैयार है । पुत्र की बातें सुनकर पिता उसे ऐसा दण्ड सुनाते हैं जिससे पुत्र का अहंकार नष्ट हो जाय । वे उसे कहते हैं 'छः मास तक श्वसुरालय में जाकर सेवा करना और जूठे भोजन पर अपना पोषण करना । भारवि तुरंत इस प्रायश्चित को स्वीकारता है और प्रारंभ भी करता है । माता द्वारा खिलाये जाने पर भी उसे ग्रहण नहीं करता और माता-पिता की आज्ञा लेकर प्रस्थान करता है ।

इस प्रसंग से हम भारवि के चरित्र का इस प्रकार मूल्यांकन

कर सकते हैं, भारतव अत्यंत मेधावी, प्रतिभावान व्यक्ति है । शास्त्रार्थ में उसे कोई हरा नहीं सकता था । किंतु उसमें थोड़ा अहंकार भी था । भारवि में अहंकार की भावना है, साथ ही प्रतिशोध का भाव भी है । किंतु जब उसे इस बात का ज्ञान होता है कि अहंकार को नष्ट करने के लिए ही पिता ने उसे अपमानित किया है, तो वह ग्लानि से भर उठता है । क्षमा याचना करता है । प्रायश्चित को तत्परता से स्वीकारता है । विद्वानों के लक्षण भारवि में पूरे-पूर है ।

30B.6.2. श्रीधर

श्रीधर भारवि के पिता है । यह व्यक्ति भी वेदों, उननिषदों का ज्ञाता, संस्कृत पंडित, शास्त्रार्थ करनेवाला, अनुशासन प्रिय, सदभाव एवं सदवृत्तियों के प्रति प्रेम और श्रद्धा रखनेवाला, पुत्र वत्सल, पत्नी की पीड़ा और दुःख को समझनेवाला, दूसरों की व्यथा को समझनेवाला सज्जन पुरुष है ।

प्रस्तुत एकांकी में उसके व्यक्तित्व की यह सारी विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं । सुशीला के साथ उसका व्यवहार अत्यंत प्रेमपूर्ण है । भारवि के घर न लौटने की चिंता में घुली सुशीला को समझाते हैं, पर उसका मन जब कहीं भी नहीं लगता, छोटे से छोटे खटके से, आहट से जब उसे लगता है कि बेटा ही आया होगा, और वह उसी की सुध में रहने लगती है तो अपनी पत्नी का यह दुःख उन्हें सहन नहीं होता और वे उसे आश्वासन देते हैं कि वे स्वयं जाकर भारवि को खोज लायेंगे । अपनी पत्नी को साहस बँधाते हैं ।

श्रीधर शास्त्रार्थ भी करते हैं । वेदों और उपनिषदों का नित्य पाठ भी करते हैं । वे अपनी पत्नी को भी वेद पाठ करने के लिए कहते हैं और सुशीला भी वेदपाठ करती हैं ।

श्रीधर पुत्र-वत्सल है । वह अपने पुत्र की विद्वता और लोकप्रियता से बहुत प्रसन्न है । उसे इस बात का बड़ा हर्ष है कि

भारवि अपनी विद्वता से पंडितों को शास्त्रार्थ में पराजित कर देता है । किंतु वे इस बात से चिंतित भी है कि इस जीत से धीरे-धीरे भारवि में अहंकार बढ़ रहा है । उनका विचार है कि अहंकार के कारण मनुष्य उन्नत शिखर पर पहुँच नहीं पाता और वे भारवि को उन्नत शिकर पर देखना चाहते हैं । वे चाहते हैं कि उनका पुत्र और भी अधिक पंडित और महाकवि बने । किंतु वे उसके अहंकार पर अंकुश रखना चाहते हैं । इसलिए पंडितों की मंडली में उसे मूर्ख और अज्ञाना कहकर उसकी ताड़ना और लांछना करते हैं । किंतु इस ताड़ना के पीछे उनका बहुत बड़ा उद्देश्य भी है । वे कहते हैं "प्रशंसा तो सभी करते हैं किंतु अधिकारी से निन्दा भी होनी चाहिए । मैं नहीं चाहता कि अहंकार के कारण मेरे पुत्र की उन्नति रुक जाय " पर उनकी लाछना से अपमान को अनुभव कर जब दो दिन तक भारवि लौटता नहीं तो वे भी चिंतित होते हैं और स्वयं उन्हें खोजने के लिए तत्पर होते हैं । भारवि से पुनः मिलन और उसके पश्चाताप और ग्लानि को देखकर वे उसे क्षमा भी करते हैं । श्रीधर की हाथ की तलवार और उसके प्रतिशोध की भावना को जानकर वे अपनी को उसके सम्मुख हत्या कर देने के लिए प्रस्तुत होते हैं ।

वे आत्महत्या को जथन्य पाप मानते हैं । सुशीला भारवि के न लौटने पर जब यह आशंका प्रकट करती है कि कहीं उसने आत्महत्या नहीं की है ? और फिर भारवि ही स्वयं पिता की अनुमति से आत्महत्या कर लेने की बात कहता है तो वे यही कहते हैं कि मेरे अनुशासन के बिना भारवि ऐसा कुद नहीं करेगा ।

श्रीधर चाहते हैं कि अपने बेटे के दिमाग से अहंकार पूर्णतः निकल जाय । इसलिए जब वे उसे प्रायश्चित के लिए दण्ड भी देते हैं तो ऐसा देते है जिससे उसके मन में उठनेवाला अहंकार पूर्वतः कुचल जाय ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रीधर एक ऐसा पिता हैं जो

अपने बेटे को उन्नत शिखर पर ले जाने के लिए उसको लांछित कर सही मार्ग पर लाना चाहता है ।

30B.7. संवाद (कथोपकथन)

डॉ.रामकुमार वर्मा ने संवाद की जो भी विशेषताएँ गिनाथी हैं, उनमें से कुछ उसके प्रयोजन से संबंधित है । उनके अनुसार एकांकी के संवाद चरित्र की चारित्रिकता को प्रकट करते हैं, एकांकी के कथा-सूत्र को विकसित करते है, और पात्रों के भावों को प्रकट करते हैं । प्रस्तुत एकांकी के संवाद उपर्युक्त प्रयोजनों की पूर्ति अवश्य करते हैं । वास्तव में प्रस्तुत भारवि के चरित्र को ही उदधाटित करने के लिए लिखा गया है अतः प्रयुक्त संवाद चरित्रकता को उदधाटित करने में सक्षम है ।

रामकुमार वर्मा कवि होने के कारण उनके संवादों में कलात्मकता दृष्टिगोचर होती है । संवाद इतने सक्षम है कि तत्कालीन वातावरण को प्रस्तुत करते हैं । हालाँकि प्रस्तुत एकांकी चारित्रिक वैशिष्टय को उदधाटित करना चाहता है, लेकिन तब भी संवाद बोझिल या लंबे नहीं है । संवाद गतिशील, रोचक, मार्मिक, चूस्त एवं संक्षिप्त है । कौतुहल को बनाये रखते हैं और कथानक को चरमसीमा पर ले जाते हैं । पिता के क्षमा के बाद लगता है जैसे एकांकी समाप्त होने आया है, पर जब दण्ड की बात आती है तब उत्सुकता बढ़ जाती है कि अब पिता दण्ड देंगे भी या नहीं और देंगे तो कौन-सा देंगे । दण्ड को सुनाने और स्वीकृत करने के साथ ही पर्दा गिरता है । इस प्रकार लेखक एकांकी को एक ऊँचे बिंदु पर लाकर समाप्त करते हैं जिसका अपना एक प्रभाव बना रहता है ।

30B.8. भाषा-शैली

रामकुमार वर्मा की हिन्दी एकांकी साहित्य में अपनी एक वैयक्तिकता है । वातावरण और प्रसंग के अनुसार भाषा शैली

बदलती हैं । ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकों में या प्राचीन भारत की सभ्यता और संस्कृति से संबंधित नाटकों में एकांकीकार तत्सम प्रधान युद्ध हिंदी का व्यवहार करते हैं । ऐसी भाषा से अपेक्षित वातावरण निर्माण में बहुत सहायता मिलती है । भाषा के प्रति वर्मा जी की यह जागरुकता सचमुच बहुत प्रशंसनीय है । दूसरी बात यह है कि डॉ.वर्मा के कवि ने संवाद लेखन में सर्वत्र उनके नाटककार को प्रभावित किया है । उनके नाटकों में सीधी-सादी भाषा बोलने वाले पात्र कम मिलते हैं । अलंकृत भाषा का व्यवहार अधिक पात्र करते है । प्रस्तुत नाटक में सुशीला गृहीणी ही है, पर उसकी भाषा भी काफी मँजी हुई है - द्रष्टव्य है - **सुशीला :** शास्त्रार्थ के नियमों में माता का हृदय नहीं बाँधा जा सकता । शास्त्रतो तत्व की बात कहता है, उसे आँसुओं की तरलता और सुख की विह्वलता का अनुभव नहीं है । ऐसी भाषा से संवादों में सौंदर्य और माधुर्य आया है ।

30B.9. उद्देश्य

जैसा कि समीक्षा में लिखा है प्रस्तुत एकांकी का प्रमुख उद्देश्य अहंकार का त्याग है । अहंकार से मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता, अतः अन्य अगर प्रशंसा कर भी रहे हों तो अधिकारी को चाहिए कि वह उस व्यक्ति का उचित मार्ग पर लाये । यहाँ रामकुमार वर्मा ने श्रीधर के द्वारा भारवि को सही पथ पर लाते हुए दर्शाया है । इसके साथ ही भारवि के प्रायश्चित के माध्यम से लेखक ने कुभावों के हनन का मार्ग दिखाया है ' भारवि पिता से प्रतिशोध लेने हाथ में तलवार लिये आता है, पर पिता से प्रतिशोध लेने हाथ में तलवार लिये आता है, पर पिता के भाव को जानकर ग्लानि से भर जाता है और पिता द्वारा दिये दण्ड को तन्बर होकर स्वीकारता है और प्रायश्चित के लिए सहर्ष निकल पड़ता है । एकांकीकार भारवि के माध्यम से यह भी बताते हैं कि दण्ड में दिया जीवन, जीवन नहीं है । कारण जीवन ब्रह्म की विभूति है । इसे चिन्ता में घुलाना, पाप में लपेटना, दुःख में विलखाना सबसे

बड़ा अपराध है ।'' अर्थात् जीवन को दण्ड स्वरूप नहीं लेना चाहिए ।

30B.10. बोध प्रश्न

1. 'प्रतिशोध' एकाँकी का सार लिखकर उसकी विशेषताएँ बताईए ।
2. श्रीधर का चरित्र-चित्रण कीजिए ।
3. भारवि का चरित्रग्त विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

NOTES

NOTES

इकाई इकत्तीस -ए : सीमारेखा - विष्णु प्रभाकर

इकाई की रूपरेखा

31A.0. उद्देश्य

31A.1. प्रस्तावना

31A.2. लेखक परिचय

31A.3. कथानक

31A.4. कथानक की समीक्षा

31A.5. रंग संकेत

31A.6. संघर्ष / चरमसीमा

31A.7. संवाद

31A.8. भाषा-शैली

31A.9. उद्देश्य

31A.10. बोध प्रश्न

31A.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने रामकुमार वर्मा विरचित प्रतिशोध एकाँकी का अध्ययन किया । अहंकार से मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता, प्रशंसा से मनुष्य अपनापन (मानवीयता को) भूल जाता है । इसलिए कभी-कभी उसे सही रास्ते पर टिकाने के वास्ते उसे कोसना भी पड़ेगा ।

31A.1. प्रस्तावना

अब आप इस इकाई में विष्णु प्रभाकर की प्रसिद्ध सामाजिक एकाँकी 'सीमारेखा' के बारे में अध्ययन करेंगे ।

31A.2. लेखक परिचय

विष्णु प्रभाकर उन लेखकों में हैं जिन्होंने रेडियो की प्रेरणा से नाट्य-लेखन प्रारंभ किया था । उन्होंने रेडियो-नाटक के स्वतंत्र-अस्तित्व को स्वीकार करते हुए स्वयं लिखा है "सच तो यह है कि अभी तक मैंने रेडियो के लिए लिखा है । उनमें से कई एकांकी रंगमंच पर आये हैं और उन्होंने मेरे इस विश्वास को दृढ किया है कि रंगमंच और रेडियो कला की दृष्टि से ये बिलकुल दो चीजें हैं ।" विष्णु प्रभाकर ने प्रारंभ में अपने नाटक केवल रेडियो के लिए लिखे, पर बाद में कुछ नाटकों में एक साथ ही रंगमंच और रेडियों के लिए लिखने की प्रवृत्ति मिलती है । आगे चलकर तो उन्होंने कुछ नाटकों की रचना केवल रंगमंच के लिए भी की है ।

विष्णु प्रभाकर मानवतावादी कलाकार है । यथार्थ की पृष्ठभूमि पर आधारित आदर्श का स्वर इनकी कृतियों में सुनायी पड़ता है । विषय की दृष्टि से इनके नाटकों में विविधता है । इन्होंने ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि सब प्रकार के कथानकों पर नाटकों की रचना की है, पर सबके मूल में मनोवैज्ञानिक नाटक लिखन में इनकी विशेष रुचि है । इन्होंने

मनुष्य के ऊपर का कृत्रिम आवरण हटा कर उसके वास्तविक रूप को ही दिखाने का प्रयत्न किया है । मनुष्य का यह रूप बड़ा संवेदनशील, भावप्रवण और कोमल है । विष्णु प्रभाकर की यही विशेषता है कि इन्होंने अपने नाटकों को मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित कर मानवता में अपना विश्वास प्रकट किया है ।

इनका रचना संसार बहुत व्यापक है किंतु इनमें से प्रमुख हैं 'मीना कहाँ है ?', 'क्या वह दोषी था ?', 'दो किनारे',, 'सीमा-रेखा युग-सन्धि', 'प्रकाश और परछाई', 'समरेखा-विषमरेखा', 'सवेरा', 'सांप और सीठी', 'मुरब्बी', 'संस्कार और भावना', 'जहाँ दया पाप है', 'उपचेतना का छल', 'वीरपूजा', 'दरिन्दा', 'दस बजे रात', 'अशोक', 'पूर्णाहुति' आदि ।

31A.3. कथानक

प्रस्तुत एकांकी में परिवार के सारे सदस्य एक सामाजिक घटना से जुड़े हैं । एक ही परिवार में एक उपमंत्री है (शरतचन्द्र), एक पुलिस कप्तान है (विजय) एक व्यापारी है (लक्ष्मीचन्द्र) और एक जनता का प्रतिनिधि हैं (सुभाष) ! राजगंज में विद्यार्थियों के आंदोलन ने हिंसक रूप धारण कर लिया है, बैक लुटने का प्रयास किया गया है । भीड़ बेकाबू होती जा रही है, जिससे सरकार को गोली चलानी पड़ी है । इस गोलीबारी में चार पाँच मारे गये हैं, और पंद्रह-बीस घायल हो गये है और उन्हें असचताल में भर्ती किया जा रहा है । इस घटना से इस परिवार में एक तनाव निर्माण हो गया । उपमंत्री शरतचन्द्र अपने दृष्टिकोण से इस घटना पर सोच विचार करते हैं । विद्यार्थियों के दंगा फसाद के कारण राजगंज में अशांति मची है । शरतचन्द्र इस का जिम्मेदार विद्यार्थियों को ठहराते हैं, वे कहते हैं, "विद्यार्थी कानून की चिंता नहीं करते । बच्चे हैं, आल्हड़ हैं ! कानून अपने हाथ में ले लेते हैं । गोली चली है, तो जरूर कोई कारण रहा होगा । कुछ लोगों ने बैंक पर धावा बोला होगा । पुलिस पर पत्थर फेंके होंगे । किन्तु इस बात का अन्नपूर्णा और सविता विरोध करती है । सविता का

विचार है कि विद्यार्थियों ने अगर पत्थर फेंके हैं तो उनपर गोली चलाना गलत है । 'गोली उन्हें आत्म-रक्षा के लिए नहीं दी जाती, जनता की रक्षा के लिए दी जाती है ।'' लक्ष्मीचन्द्र जो इन सबके बड़े भाई है उनके विचार से सरकार ने गोली चलाकर अच्छा ही काम किया है । ऐसा नहीं किया होता तो सरकार की जड़े हिल जाती । ''मेरा नुकसान हो जाता । मैं सरकार की प्रजा हूँ । प्रजा की रक्षा करना सरकार का फर्ज़ है ।'' सरकार द्वारा दी जानेवाली सेवाएँ केवल किसी व्यक्ति या वर्ग के लिए नहीं होती बल्कि सारी जमता के लिए होती हैं । सविता के इस बात का विरोध अन्नपूर्णा और शरत यह कहकर करते हैं कि भीड़ में इतनी शक्ति होती है कि वह कुछ भी कर सकती हैं । अगर जनता विद्रोह करती है तो सरकार को यह देखना चाहिए कि इसका कारण क्या है ?

घटित घटना पर इसी प्रकार बातें चलती रहती हैं कि भीड़ बेकाबू हो गयी है । ऐसे समय उन्हें घटना स्थल पर जाना होता है । लक्ष्मीचन्द्र और अन्नपूर्णा उन्हें पुलिस को साथ ले जाने के लिए कहते हैं । सविता उनके साथ जाने के लिए तैयार है । किन्तु बाहर पुलिस की गाड़ी है । शरत जाना ही चाहते कि तभी पुलिस के कप्तान विजय आते हैं । उनके आते ही सब जैसे यही जानता चाहते हैं कि अब हाल क्या है ? और आखिर ऐसा क्यों किया ? गोली क्यों चलायी ? लक्ष्मीचन्द्र जहाँ विजय के कार्य की प्रशंसा करते हैं तो दूसरी शरत उसका विरोध करते है कि आखिर जनता के राज में गोली नहीं चलाते । विजय कहता है कि यह गुण्डों का राज है । किंतु सविता कहती है कि 'सभी गुण्डे नहीं होते । हाँ, गुण्डों के बहकावे में आ जायें ।' शरत जो शासक है सविता की बातों से तिलमिला उठता है । पर सविता उन्हें समझती है कि 'जन-राज में शासक कोई नहीं होता, सब सेवक होते हैं । और सेवक को चाहिए कि वह मर मीटकर जनता की सेवा करे । जिनपर व्यवस्था और न्याय की जिम्मेदारी है, उनका दायित्व अधिक है ।

विजय शरत को बताता है कि किस प्रकार भीड़ बेकाबू हो उठी । विद्यार्थियों ने प्रथम प्रदर्शन किये । डिपो पर हमला किया । वहाँ से बैंक के पास गये । केवल विद्यार्थि ही भीड़ में नहीं थे । शरारती भी ऐसे अवसरों की ताक में रहते हैं । पुलिस ने भीड़ को रोका तो उन्होंने पत्थर फेंके और इस तरह एक इन्स्पेक्टर का सिर फूट गया । विजय यह सारी घटना बता ही रहा है कि तभी जन नेता सुभाष आता है । वह काफी त्रस्त और परेशान लगता है । वह शासन के खिलाफ है । उसका विचार है कि स्वतंत्र भारत में गोली चलाना जुर्म है । शासक को चाहिये कि राज्य की रक्षा करते-करते प्राण दे दें । प्राण लेने नहीं चाहिए । हमें देने का ही अधिकार है, लेने का नहीं । 'सुभाष केवल आदर्श की बात नहीं करता उसे कार्यरूप में ही लाना चाहता है । वह कहता है कि "मैं जनता से प्रतिज्ञा करके आया हूँ कि आज शाम एक गोली चलानेवाले कप्तान पुलिस को मुझत्तल कराके छोड़ूँगा ।"

उसकी इस बात पर सभी को आश्चर्य होता है । सुभाष, शरत, विजय और लक्ष्मीचन्द्र को उनके कार्य की कमियाँ बताकर चुप्प करा देता है । और शरत से कहता है कि निहत्थी जनता पर गोली चलानेवाले पुलिस को मुअतल किया जाय । वह लक्ष्मीचन्द्र को व्यापारी होने के कारण स्वार्थी कहता है । दोनों के बीच बात बहुत आगे तक बढ़ जाती है और दोनों क्रोधित होकर बात ही नहीं करते । फिर शरत और सुभाव के बीच पुनः इस बात को लेकर बहस होती है कि शासन ने ठीक काम किया है या जनता ने ! दोनों अपने-अपने पक्ष को सिद्ध करना चाहते हैं कि तभी तारा विजय का ढूँढती आती है और बदहवास सी होकर कहती है, 'उसका मनचाहा हो गया । उसकी गोली अरविंद के सीने से पार हो गयी ।' सभी अवाक् रहते हैं । सविता तारा की बात की पुष्टि करती है । लक्ष्मीचन्द्र अपने बेटी की मृत्यु से व्यथित हो उठता है । सभी विध्ल हो उठते हैं कि तभी फोन पर विजय को मालूम हो जाता कि भीड़ बेकाबू हो गयी है । यह सुनते ही शरत और

सुभाष विजय के साथ बाहर निकल जाते हैं । लक्ष्मीचन्द्र जो अबतक गोली चलाने का समर्थन कर रहे थे, यह जानकर कि अरविंद पुलिस की ही गोली से ही मारा गया है तो वे पुलिस के इस कार्य का विरोध करते हैं, "पुलिस को अपनी जान इतनी प्यारी है कि एक दस वर्ष के बच्चे से भी उन्हें डर लगा ।" तारा इस घटना से विक्षुब्ध हो जाती है तो लक्ष्मीचन्द्र अपना-आपा खो बैठते है । शरत भाई साहब को सांत्वना देते हैं कि तभी उन्हें मंत्री-मंडल की बैठक में जाना होता है । सुभाष शरत को लेने आया है । कारण अब देंगे ने एक अलग ही रूप धारण किया है । विद्यार्थि पीछे रह गये हैं और विजय ने गोली चलाने से इनकार कर दिया है । जनता उत्तेजित हो गयी है । विजय जनता के सामने खड़ा है । शरत सविता सुभाष के साथ जाते हैं । लक्ष्मीचन्द्र अभी भी काफी व्यथित है । सभी चिंतित है । तभी अकेली सविता आती है । वह भीड़ को मात्र देख आयी है । उसने विजय को मात्र वहाँ खड़े होता हुआ देखा था । वह यही बात कह रही है कि तभी फोन पर कुछ बातें करके वह निकल जाती है । लक्ष्मीचन्द्र भी निकलते हैं । उमा और अन्नपूर्ण तारा के साथ घर पर हैं कि तभी शरत सुभाष, विजय और अरविंद की लाशों को ले आत है । जब भीड़ी बेकाबू होकर विजय से अरविंद के बारे में पूछने लगी तो विजय ने अरविंद का बदला उसकी हत्या द्वारा लेने को कहा । भीड़ ने उसे मार डाला और उसी भीड़ में सुभाष भी कुचला गया ।

शरत कहता है कि इन्होंने अपना बलिदान दिया है । अब चारों ओर शांति है । ये सभी शहिद हो गये हैं और उनकी मौत पर किसी को आँसँ नहीं बहाने है । वह तीनों की लाशों अंदर लाता है और कहता है कि सुभाष और अरविंद जनता की क्षति है तो विजय सरकार की क्षति है । सविता से देश की क्षति कहती है । रोती-धोती अन्नपूर्णा उसे अपने घर की क्षति कहती है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक छोटी सी घटना के द्वारा

कितना बड़ा हंगामा होता है । एक ही परिवार के सदस्य किस प्रकार व्यथित है और एक दूसरे से कितने जुडे भी है । यहीं हम युगसन्धि देखते हैं ।

31A.4. कथानक की समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी में नाटककार ने विद्यार्थियों के प्रदर्शन, डेपोपर पर हमला, बैंक लूटने का प्रयास, पुलिस पर पत्थर फेंकना आदि समाज विघातक घटनाओं को केन्द्र में रखकर एक ही परिवार में रहनेवाले शरत (उपमंत्री), लक्ष्मीचन्द्र (व्यापारी), विजय (कप्तान), सुभाष (जन नेता), सविता (एक आम पर विशुद्ध विचार करनेवाली), अन्नपूर्णा (ममता मयी माँ) आदि सदस्यों की प्रतिक्रिया को दर्शाया है । किस प्रकार एक नेता, एक व्यापारी, एक पुलिस इन्स्पेक्टर तथा एक जन नेता इन हादसों पर विचार करता है और अपने पक्ष को उचित एवं सही सिद्ध करने का प्रयत्न करता है इसका अत्यंत मर्गस्पर्शी चित्रण एकांकीकार ने किया है । किंतु उन्हीं के घर में एक बालक अरविंद की मृत्यु पुलिस की गोली से हो जाती है तो उनकी विचारधारा किस प्रकार बदलती है और वे अपने कर्म के दूसरे पक्ष पर सोचते हुए जनता के सम्मुख जाते हैं और भीड में कुचल कर शहीद हो जाते हैं, उसका भी दर्दनाक चित्रण लेखक कर जाते हैं ।

प्रस्तुत एकांकी सामाजिक तो है ही । साथ ही इस एकांकी में एकांकीकार ने मनोविज्ञान का आधार लेकर पात्रों की सोच और मानसिकता का अत्यंत सटीक चित्रण किया है । शरत का व्यक्तित्व शासक का है तो वह अंत तक शासन के बारे में ही सोचता है, तो लक्ष्मीचन्द्र व्यापारी है प्रारंभ में गोली चलाने का समर्थन करता है, कारण व्यापारी होने के कारण उसका नुकसान होगा । फिर जब पुलिस की गोली से अरविंद मर जाता है तो वह गोली चलाने का विरोध करता है । विजय जो गुण्डों की बात कहता है वही अरविंद का बदला उसकी हत्या से ले लेने को

कहता है और भीड़ के सम्म निहत्या खड़ा होता है । गोली चलाने से इनकार करता है और मारा जाता है । सविता देश की हर स्थिति का अत्यंत गंभीरता से विचार करनेवाली स्त्री पात्र है । वह बेझिझक एवं सही बात कहती है । बड़ों से बोलते समय भी सच्चाई को ही प्रस्तुत करती है । सुभाष विरोधी दल का नेता और जनता का प्रतिनिधी है । वह जनता की सेवा ही अपना मूल धर्म मानता है और उसी के लिए अंततः भीड़ में कुचला जाता है ।

प्रस्तुत एकांकी में एकांकीकार ने राजनीतिक गुटों तथा नगरों में बढ़ते हुए आंदोलनों, समाज विघातक शक्तियों की ओर भी संकेत किया है । प्रदर्शन, नारे बाजी, लूट-पाट आज का जो एक सामाजिक संकट बनकर आया है, उसके लिए कौन जिम्मेदार है ? इस पर भी विचार किया गया है, संभवतः लेखक पाठकों को विचार करने को प्रवृत करते हैं । ऐसी हमारी व्यवस्था में क्या कभी ऐसा हो सकता है कि विद्यार्थी और जनता शासन खिलाफ हो जाती हैं और प्रदर्शन आदि पर उतर आती है ? प्रस्तुत एकांकी विचारीतजक तथा सामाजिक एकांकी है ।

31A.5. रंग संकेत

प्रस्तुत एकांकी में मात्र एक ही दृश्य है और स्थान है । उपमंत्री शरत के बंगले का ड्राईंग रूम । काल है आधुनिक कांग्रेस का शासन-काल । जैसा कि प्रारंभ में लिखा है कि इस एकांकी की केन्द्रीय घटना विद्यार्थियों का प्रदर्शन, दंगा-फसाद, गोली चलना, अरविंद की मृत्यु है । किंतु ये दृश्य रंगमंच में दिखाये नहीं गये हैं इनकी सूचना या तो टेलीफोन पर खबर देकर दी गई हैं या किसी पात्र के रंगमंच पर प्रवेश और उसके द्वारा घटित घटना के वृतान्त द्वारा दी गई है । इस एकांकी का वैशिष्टय ही है कि वातावरण निर्मिती ध्वनि संकेतों द्वारा दी गई : शोर बढ़ना, फोन की घंटी बजना, सबका टेलीफोन के पास इकट्टा होना आदि से एकांकी में विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है ।

31A.6. संघर्ष / चरमसीमा

विष्णु प्रभाकर के सभी नाटक संघर्ष-प्रधान नाटकीय स्थिति अथवा मार्मिक क्षण विशेष पर आधारित है । नाटक प्रारंभ होने के कुछ ही मिनटों में नाटककार मूल समस्या को सामने रख श्रोताओं की उत्सुकता जगा देता है । प्रस्तुत एकांकी का प्रारंभ ही समस्या के साथ होता है । शरत जो उपमंत्री है फोन पर स्थितियों के बारे में बात करता है और यहीं से कथा गति धारण करती है । इसके बाद भीड का बेकाबू होने और गोली चलने से भावनाओं का आवेग इस प्रकार चलता है कि रोचकता अंत तक बनी रहती है । और अंत में एक आकस्मिक मोड़ लेकर एकांकी चरम सीमा तक पहुँचता है । अरविंद की मृत्यु (इसकी किसी ने कल्पना भी नहीं थी) हो जाती है और कथानक उस बिंदु पर पहुँचता है जब पाठक यह जानने को उत्सुक होता है कि अब शरत, विजय और सुभाष की प्रतिक्रिया क्या होगी ? जब शरत विजय और सुभाष की लाशें ले आता है तो एक झटका सा लगता है, जिससे कहीं बुद्धि चमत्कृत हो उठती है या हृदय द्रवित । यह आकस्मिकता अस्वाभाविक नहीं लगती कारण इनके लिए मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पहले से निर्मित रहती है ।

31A.7. संवाद

प्रस्तुत एकांकी में संवादों का अपना एक अलग ही महत्व है । पात्रों द्वारा किये गये वाचिक अभिनय से ही प्रस्तुत एकांकी के विभिन्न पात्रों के मानसिक भाव, तनाव, आदि की अभिव्यक्ति होती है । प्रस्तुत एकांकी के संवाद भावपूर्ण, गतिशील, प्रभावी, रोचक, मर्मस्पर्शी एवं कथानक की गति को बढ़ानेवाले हैं । प्रस्तुत एकांकी की संवाद योजना में नाटककार ने इस बात पर विशेष ध्यान रखा है कि प्रत्येक पात्र अपने आदर्श, विचार और द्वन्द्व को अभिव्यक्त कर सकें । इस दृष्टि से संवादों में एक सुसंबद्धता के साथ-साथ संघर्ष भी मिलता है । कोई भी वाक्य अथवा संवाद ऐसा नहीं

जिससे नाटक की गति में बाधा आयी हो । संवादों में सहजता और स्वाभाविकता गुण पूर्णतः दृष्टिगोचर होता है ।

31A.8. भाषा-शैली

प्रस्तुत एकांकी भाषा प्रवाही, भावानुरूप, रोचक, हृदयस्पर्शी तथा प्रभावी है । इस एकांकी का विषय ही एक सामाजिक दुर्घटना, प्रदर्शन, दंगा फसाद होने के कारण गोली-बारी, नारे, शोर आदि वातावरण को जीवंत बनाया गया है । लेखक ने विषय के अनुरूप ही सक्षम भाषा का प्रयोग किया है जिससे एकांकी का एक विशिष्ट प्रभाव मिलता है ।

31A.9. उद्देश्य

प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य शासक और शासन के कार्य का पर्दाफाश करना । व्यापारियों के सिद्धांत की पोल खोलना तथा सामाजिक व्यवस्था पर कड़ा प्रहार करना रहा है । प्रस्तुत एकांकी सामाजिक व्यवस्था, शासन व्यवस्था, की कमियों की ओर संकेत करता है । एकांकीकार ने सामाजिक यथार्थ का चित्रण करते हुए हमारी व्यवस्था पर प्रश्न लगाया है । अत्यंत नाटकीय ढंग से लेखक ने प्रश्न का समाधान पाने का प्रयत्न किया है ।

31A.10. बोध प्रश्न

1. विष्णु प्रभाकर की 'सीमारेखा' की सार बताकर एकाँकीकार का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ।
2. एकाँकी तत्वों के आधार पर 'सीमारेखा' की विवेचना कीजिए ।

NOTES

NOTES

इकाई इकत्तीस -बी : वसन्त - अज्ञेय

इकाई की रूपरेखा

31B.0. उद्देश्य

31B.1. प्रस्तावना

31B.2. लेखक परिचय

31B.3. कथानक

31B.4. समीक्षा

31B.5. संवाद और भाषा शैली

31B.6. उद्देश्य

31B.7. बोध प्रश्न

31B.0. उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने विष्णु प्रभाकर जी से विचरित एकाँकी 'सीमारेखा' की सार जान लीं और लेखक का उद्देश्य भी जान लीं ।

31B.1. प्रस्तावना

इस इकाई में आप 'अज्ञेय' जी का प्रसिद्ध एकाँकी 'वसन्त' के बारे में अध्ययन करेंगे, तथा आपको अज्ञेय जी की प्रतीकात्मक के बारे में जानकारी भी मिलेगी ।

31B.2. लेखक परिचय

सच्चिदानंद हीरानन्द वात्सायन 'अज्ञेय' का जन्म 7 मार्च 1911 को देवरिया जिले के कुशीनगर स्थान में हुआ । अपने पिता हीराचंद के कारण इन्हें विद्वानों का संपर्क सदैव सुलभ रहा है । इनका पालन-पोषण अत्यंत सुंसस्कृत वातावरण में हुआ । प्रारंभ से ही इन्हें अंग्रेजी भाषा और साहित्य के साथ भारत के इतिहास और दर्शन का सहज ज्ञान परिवार से प्राप्त हुआ था । युवावस्था में उनका संपर्क क्रांतिकारी आंदोलन-कारियों से हो गया । इन्हें अनेक वर्ष भारतीय जेलों में बिताने पड़े । वहीं से इन्होंने साहित्य-रचना प्रारंभ की । परंपरा, कोठरी की बात आदि इनकी प्रारंभिक कहानियाँ है । वैसे अज्ञेय मूलतः कवि हैं, लेकिन उन्होंने शेखर एक जीवनी, अपने-अपने अजनबी, नदी के द्विप नामक उपन्यास लिखकर उपन्यास साहित्य में भी अपना स्थान बना लिया है । निबंध तथा नाटक साहित्य में भी इनका विशिष्ट योगदान है ।

'अज्ञेय' जी हिंदी के शिष्टतम एवं गंभरतम साहित्यकारों में से हैं । वे एक जागरूक और आत्म-विश्वासी व्यक्ति हैं । जीवन का उनका अनुभव वैविध्यपूर्ण और परिपक्व कोटि का है । इस युग के वे अकेले लेखक हैं जिन्हें युद्ध का कुछ अनुभव है संसार की निरंतर विकसित चेतना के स्तर पर जीवित रहने के कारण उन्हें

सच्चे अर्थों में आधुनिक कहा जा सकता है । इन्होंने लगभग बारह कविता-संग्रहों की रचना की । 'कितनी नावों में कितनी बार' इस कृति के लिए उन्हें ज्ञानपीठ से भी सम्मानित किया गय है ।

31B.3. कथानक

प्रस्तुत एकांकी प्रतीकात्मक है । इसमें एकांकीकार ने मन की चेतना के वसंत का रूप दिया है । मनुष्य के मन की चेतना पर सुख और हर्ष तथा दुख और पीड़ा निर्भर करती है । इस बात का स्पष्टीकरण अज्ञेय जी ने वसंत इस एकांकी में दिया है ।

नाटक का आरंभ एक गाती स्त्री से होता है । उसके गीत तथा व्यवहार से ज्ञात होता है कि वह अत्यंत खुश है । उसकी इन पंक्तियों से ही इस बात का पता चलता है - 'आए दिन मनुहार के, दुलार के - फूल कचनार के ।' इसी समय बाँसूरी के स्वरों की पृष्ठभूमि में वसंत (एक) आकर उसे बताता है कि, वह मलय समीर हैं, फूलों का रंग है, आम की मंजरी है, कोयल का स्वर है । केवल बाहर ही नहीं मनुष्य की शिरा-शिरा में अंगों के स्फूरण में मन के उत्साह में उसका स्वर बोलता है । वसंत की इन बातों से आनन्दित स्त्री गाने लगती है । अपना हर्ष जताने लगती है । उसका आनंद बाँसूरी के स्वरों का ताल पकडता ही है कि तभी इस राज का मन्द्र स्वर उठता है और वसंत आकर स्त्री से कहता है कि वह पतझड़ है, जिससे हरी-भरी धरती जीर्ण शीर्ण हो गई थी । वह धूल का झक्कड़ है, सुबह की धुन्ध । क्षितिज पर जमा धुआँ है । भीतर की हताशा है । आतंक है । ग्रीष्म की सनसनाती लू से उड़ती गर्म रेत है । इस प्रकार दोनों अपना-अपना परिचय देते हैं । वे दोनों स्त्री को समझाने का प्रयास कर रहे हैं । स्त्री आनंद, हर्ष से युक्त हो सकती है, ऐसा वसंत (एक) कहता है तो दूसरा उसे कहता है कि वह जो है वही वह है । अर्थात् हताशा-निराशा । इन दोनों के वार्तालाप में स्त्री उधेडबुन में पड़ जाती है और सोचती है कि वह "क्या थी - क्या हूँ - क्या

हूँ ? " पर (प्रश्न) इन का उत्तर देना वह टालती आयी है । वह अपने से ही इस प्रकार सोचती-विचारती रहती है ।

इसी समय पति का प्रवेश होता है । उसे इस प्रकार अकेले में वार्तालाप करता देखकर विस्मित होता है । उसकी बातें सुनकर उसे लगता है स्त्री मालती काफी थक गई है । अपनी व्यस्तता के कारण वह अपनी पत्नी को सुख नहीं दे पाया है । इसलिए मालती की यह बातें कि "स्त्रियाँ विश्राम नहीं करती, क्योंकि वे शायद काम भी नहीं करती । वे कुछ करती ही नहीं - वे शायद सिर्फ होती ही हैं । बालिका से किशोरी, कुमारी से पत्नी, बेटी से माँ, एक निरसंग आत्मा से एक परिगृहित कुनबा - वे निरंतर कुछ न कुछ होती ही चलती है ।" उसकी बातों से पति पीड़ित तो होता है पर नये उत्साह से उसे सिनेमा के लिए या बगीचे में ले जाने के लिए तैयार करता है । पत्नी का मन बहलाने के लिए वह पुरानी स्मृतियों को कुरेदता तो हे, पर मालती विशेष कोई प्रतिक्रिया नहीं करती ।

इसी समय बालक वसंत के आने के कारण पतंग की जिद करता है । मालती उसे पतंग उडाने के लिए मना करती हैं और कहती है कि वह अपने पिता के साथ बगीचे में चला जाय कारण उद्यान में ही वसंत होता है । वहीं सुंदर फूल होते हैं, वहीं कोयल कूकती है । पर बालक माँ को छोड़कर कहीं नहीं जाना चाहता क्योंकि उसके लिए वसंत माँ ही है । वसंत की इस नयी परिभाषा से वह विस्मित होती है । और बेटे से कहती है "तू तो केवल पतंग का वसंत जानता है, मगर मुझमें बहुत-से वसंत है - कुछ मीठे, कुछ फीके, कुछ हँसते, कुछ उदास ।" और इन सबमें सबसे अच्छा मौसम उसके लिए वह बालक है । क्योंकि यह बालक उसकी सारी आशाओं का, सारे अनुभव का पौधा है । वह उसका युगों-युगों का वसंत है । और इस विचार के साथ ही उसकी सारी हताशा, निराशा खतम हो जाती है और पृष्ठभूमि में बाँसूरी के स्वर स्पष्ट होने हैं और तीव्र आलोक में वह गा उठती है

''सखि, वसंत आ गया ।
जागो, जागो,
जागो, सखि वसंत आ गया, जागो ।''

31B.4. समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी प्रतीकात्मक है । इसमें एकांकीकार ने 'वसन्त' का प्रयोग मन के हर्ष, आशा, आह्लाद, उमंग, दीप्ति, स्फूरण, उत्साह आदि के संदर्भ में किया है । वसन्त मन की एक चेतना है । वह नवीनता के साथ-साथ हर्ष का भी प्रतीक है । मनुष्य का मन मात्र इन्हीं उमंगों और आशा-आह्लाद के साथ नहीं रहता उसके मन में पसझड़ भी होता है । पर मनुष्य इस पर विजय प्राप्त करके अपने जीवन को उमंग, आशा और आह्लाद से युक्त वसन्त में परिवर्तित कर सकता है । प्रस्तुत एकांकी में स्त्री-मालती का व्यक्तित्व यही दर्शाता है । उसके मन में प्रारंभ में वसंत और पतझड़ को लेकर थोड़ा द्वन्द्व है । वह समझ नहीं पाती वह कौन थी, क्या है और क्या होंगी । उसे लगता है वह मात्र स्तिथि है उसे मात्र होना है । उसने कभी इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया था कि वह कौन है ? संभवतः टालती ही आ रही थी । मन के संघर्ष के दौरान कभी तो हताशा इतनी बढ़ जाती है कि वह पति के साथ या पुत्र के साथ भी वह कुछ गंभीर बात करती है । जैसे -

स्त्री : (सहानुभूति से तिलमिलाकर) रहने दो । मुझे क्या करनी है छुट्टी । थकते ते मर्द है, स्त्री कभी थकती है ? काम और विश्राम-यह मर्दों की ईजाद है । स्त्रियाँ विश्राम नहीं करती, क्योंकि वे शायद काम भी नहीं करती । वे कुछ नहीं करती वे शायद सिर्फ होती है । बालक के साथ वार्तालाप करने समय यह कहती है -

बालक : न ! उड़ जानेवाली चीजों को प्यार नहीं करना चाहिए । छोड़कर चली जाती हैं तो दुःख होता है ।

स्त्री : मैं पंतक होती तो उड़ जाती, दूर-दूर ! फिर कभी वापस न आती नीचे ।

बालक : हमें छोड़ जाती माँ ?

स्त्री : तो क्या हुआ तुम तो अपनी पतंग में मस्त रहते, तुम्हें ध्यान भी न आता ।

किन्तु जब बालक उसे वसंत कहता है तो जैसे उसे भीतर का द्वन्द्व ही समाप्त होत है । पहली बार वह अपने को वसंत के रूप में देखती समझती है । फिर उसे प्रारंभ में कहे वसंत एक और दो का अर्थ समझता है । उसे लगता है कि उसमें ही बहुत से वसंत हैं - कुछ मीठे, कुछ फीके, कुछ हँसते, कुछ उदास ! और इन सबमें उसका अनुभव से और आशा से परिपूर्ण वसंत है उसका पुत्र ! वह इस नये अनुभव के साथ गा उठती है । उसका जीवन आनन्दपूर्ण हो जाता है ।

31B.5. संवाद और भाषा शैली

प्रस्तुत एकांकी में प्रयुक्त संवाद छोटे, संक्षिप्त, चूस्त एवं रोचक है । इसमें प्रयुक्त भाषा का अपना एक विशेष प्रभाव है । अज्ञेय मूलतः कवि हैं अतः नाटककार के रूप में होते हुए भी उनका कवि बोल उठता है, इसलिए वसंत (एक) और वसंत (दो) की भाषा में काव्यत्व दृष्टिगोचर होता है । वास्तव में उनका संलाप एक तरह से कविता ही है, अतः एक लय और ताल भी उसमें प्राप्त होता है । द्रष्टव्य हैं, "आम्र-मंजरी में मेरा ही आह्लाद उमंगता है । मैं कोयर के स्वर से तुम्हें-तुम्हें क्यों प्राणीमात्र को पुकारता हूँ कि देखो, अब समय बदल गया । दिन भी अपनी निरंतर सिकुड़न छोड़कर सहासपूर्वक बढ़ने लगा । जिस सूर्य से जीव-मात्र और सब वनस्पतियाँ शक्ति पांती हैं, वह स्वयं इतने दिनों की निस्तेज क्लान्ति के बाद फिर दीप्त होने लगा । केवल बाहर ही नहीं तुम्हारे शरीर की शिरा-शिरा में, तुम्हारे आगे के स्फुरण में, तुम्हारे मन के उत्साह में मेरा वसंत बोलता है । इस प्रकार इस

देखते हैं कि एकांकी की भाषा में काव्य गुण होने के साथ रोचकता, प्रवाहात्मकता, मार्मिकता और हृदयस्पर्शिता है । भाषा के प्रभावी होने के कारण ही प्रस्तुत एकांकी छूता है और सफल होता है ।

31B.6. उद्देश्य

प्रस्तुत एकांकी का उद्देश्य अपने जीवन में वसंत के समान हर्ष आनंद को लाना है । जीवन को सौन्दर्य से आप्लावित करना है । अपनी हताशा को त्यागकर आशा और आह्लाद को ग्रहण करना है । मालती का चरित्र इसी की पुष्टि करता है ।

31B.7. बोध प्रश्न

1. 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयान' साहित्य के बारे में अपना मत व्यक्त कीजिए ।
2. वसन्त एकाँकी की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

NOTES

इकाई इकत्तीस -सी : नीली झील - धर्मवीर भारती

इकाई की रूपरेखा

31C.0. उद्देश्य

31C.1. प्रस्तावना

31C.2. लेखक परिचय

31C.3. कथानक

31C.4. समीक्षा

31C.5. बोध प्रश्न

31C.0: उद्देश्य

पिछले इकाई में आपने अश्रेय विरचित 'वसन्त' एकाँकी के बारे में अध्ययन किया । इस एकाँकी अध्ययन के बाद जीवन को सौन्दर्य से आप्लावित किस प्रकार करना है इसका आपने अध्ययन किया ।

31C.1. प्रस्तावना

इस इकाई में धर्मवीर भारती से रचित 'नीली झील' के बारे में अध्ययन करेंगे । इस एकाँकी में धर्मवीर भारती ने नया प्रयोग करके दर्शकों को इस प्रकार संदेश दिया है कि हरएक व्यक्ति अपनी आत्मा को खोजना है ।

31C.2. लेखक परिचय

धर्मवीर भारती का जन्म सन् 1926 में इलाहाबाद में हुआ । जाति के ये कार्यस्थ है । सन् 1947 में इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से हिंदी एम.एम. किया । इसके उपरांत 'सिद्ध-साहित्य' नामक शोध ग्रन्थ पर डी.फिल. की उपाधि-प्राप्त कर ये विश्वविद्यालय से संबंधी ही गये ।

प्रारंभ से ही इनका झुकाव पत्रकारिता की ओर रहा हैं । प्रयोग में रहकर पहले इन्होंने लीडर प्रेस से प्रकाशित होने वाले 'संगम' साप्तहिक में इलाचन्द्र जोशी के सहायक के रूप में काम किया । पिछले कई वर्षों तक इन्होंने 'धर्मयुग' का संपादन किया । ये बड़ी लगन और सूझबूझ के व्यक्ति हैं ।

धर्मवीर भारती मूलतः एक कवि हैं । इनके चार रूपक प्रकाशित हो चुके हैं - 1.ठण्डा लोहा, 2.अंधायुग, 3.सात गीत वर्ष, 4.कर्नापिया । गद्य के क्षेत्र में भी इनका वैशिष्टयपूर्ण योगदान है । इन्होंने निबंध, एकांकी तथा नाटक में भी अपना योगदान दिया है । अंधा-युग पहले रेडियो से ही प्रसारित किया गया था ।

इन्होंने रेडियों रूपक, तथा एकांकी आदि से दृश्य-काव्य में एक विशेष स्तम्भ स्थापित किया है ।

31C.3. कथानक

प्रस्तुत एकांकी में लेखक ने एक अतिरंजित कल्पना के द्वारा आज के मनुष्य के भौतिक जीवन की ओर संकेत किया है । उन्होंने एक नीली झील की कल्पना की है इसमें झाँकने से आत्मा की निर्मलता दिखाई देती है ।

इसमें कुल चार-पात्र हैं एक है नीली झील का बूढ़ा तांत्रिक बाकी तीन पात्र है - पहला व्यक्ति, दूसरा व्यक्ति और तीसरा व्यक्ति । प्रारंभ में ही बूढ़ा तांत्रिक नीली झील के बारे में अपना वक्तव्य देता है, "मेरी इन बूढ़ी आँखों ने न कभी झील को सूखे देखा है और न बिक्षुब्ध होते हुए । इन कालीसुखी, नंगी और क्रूर चट्टानों के बीच यह झील हममें रस का संचार करती हैं, हमें जीवन देती है । हम और हमारी जाति लाखों वर्षों से इन्हीं चट्टानों के बीच इसी झील के किनारे रहे आए हैं । झील में रहनेवाली उसकी जाति के लोगों का परिचय देते हुए वह कहता है "यह हमारी जाति के लोग हैं, जो चट्टानों की छाती फोड़कर जिन्दगी उगाते हैं और बाँस की टहनियों को गुदगुदा कर संगीत बिखेरते हैं ।" ये लोग इन चट्टानों से बल, वृक्षों से छाया और झील से जीवन लेकर यहाँ इस झील के किनारे फूलों की तरह खिलते है ।

तान्त्रिक बूढ़ा हो जाने के कारण अब केवल नीली झील के आस-पास की फ़सलों की देखभाल करता है । और लोगों की आत्मा को भी । वह सबकी गिनती रखता है । इस नीली झील में हर किसी की परछाई लहराती है । पर जब कोई अपनी आत्मा खो देता है, वहाँ आता है तो यह झील क्रोधित होती है । उसकी परछाई नीली-झील में दिखाई नहीं देती तब यह तान्त्रिक उस व्यक्ति से पूछता हैं कि उसकी आत्मा कहाँ गई ? अगर वह इसका

उत्तर नहीं दे पाता तो वह उसे अपनी-आत्मा को खोज लाने के लिए अकेले अन्धि घाटियों में भेज देता है । जहाँ से कोई वापस नहीं जाता है ।

इसी समय एक और व्यक्ति (आगंतुक) प्रवेश करता है । उसे देखने के बाद सबको आश्चर्य होता है कि यह व्यक्ति यहाँ आया कैसे ? क्योंकि यहाँ मात्र नील-झील की संतानें रहती हैं और यहाँ न कोई ज़िन्दा आ सकता है न ज़िन्दा वापस जा सकता है । आगंतुक बताता है कि वह इसी झील कि संतान है । वह अपना परिचय देता हुआं कहता है "मैं, आज से बीस चन्द्रग्रहण पहले पछुआ हवाओं के पीछे-पीछे मैं यहाँ से चला गया था, उधर उस देश में जहाँ झीले बाँध दी गई हैं, जहाँ नदियों से रोशनी खींची जाती है ।" तान्त्रिक को इस संदर्भ के बाद याद आता है कि उस पछुआ हवाओं में वह खो गया था, काफी ढूँढने पर भी वह उसे मिला नहीं था । और आखिर लोगों ने उसकी कुशलता के लिए अशिर्वाद माँगा था । और आज नील-झील ने उसे वापस बुला लिया । सभी उसे ततोलते, पोशाक, थैला आदि छूते हैं ।

आगंतुक जिस देश गया था वहाँ उसने दिग्विजय की है और अब वह नीली झील को स्मरण कर पर्वतों और झीलों को सोना अर्पण करने के लिए आया है । उसने इतना सोना पाया कि उससे उसने औरतें खरीदीं और उन औरतों के लिए हाथी दाँत की शय्या ओर मोती के हार खरीदें । महीन कपड़े खरीदें । जब उन औरतों और उनके बच्चों से मन ऊब गया तब उसने मशीनें बना दीं और उन फौलाद की भट्टियों में पीस कर वे गुलाम और औरतें चतुर बन गयीं और अब अपने 'अधिकार' के लिए लड़ने लगीं । तब उसी अधिकार के बल पर उसने मशीनों और गुलामों पर अपना अधिकार जमा लिया और राजदझड उसके हाथ आ गया । यह प्रजातंत्र था । पर उसके हाथ में सोना था । उसने चालाकी से लोगों के दिमागों पर भी अपना कब्जा कर लिया था । इसलिए दोनों तरफ उसकी तानाशाही थी । और फिर दोनों प्रजाएँ

M.A. Hindi Course 3 - Block 7 form No. 2 Front

लड़ती । जैसे वह अपने से लड़ता रहा । पहला युद्ध फिर दूसरा युद्ध हुआ । फिर तीसरा युद्ध । प्रजा को जैसे खून का चस्का ही लग गया और आखिर उनका सोना, वस्त्र, धन, वैभव, तेज, बल लेकर वह नीली झील में आया है । वह उस देश से अपना सोना सही-सलामत ले आया है ।

वह अपने साथ भौतिक जगत की हर कीमती चीज सही सलामत ले आया है किंतु इस नीली झील से जो आत्मा वह साथ ले गया था, वह वापस नहीं ले आ पाया है । सच बात तो यह है कि उसे पता ही नहीं है कि आत्मा क्या होती है ? तान्त्रिक उसे याद दिलाने का प्रयत्न करता है, 'जब तुम इन चट्टानों की गोद में खेलते, तो इन चट्टानों ने तुम्हें एक आत्मा दी थी, जो इन्हीं चट्टानों की तरह अटूट और दृढ थी, इन्हीं की तरह विराट और निर्लेप । याद करो, तुम इस पेड़ की छाँह में बैठते थे, तो एक आत्मा आशीर्वाद की तरह, तुम पर छाई रहती थी । वह इस पेड़ की तरह धरती की गहराइयों से अंकुरित हुई थी । वह सौंधी मिट्टी से जीवन खींचती थी और अंधकार की पर्ते तोड़ती हुई दिन रात ऊँचे उठती थी, आकाश की ओर बढ़ती भी पवित्रता की ओर बढ़ती थी ।" पर आगंतुक को कुछ याद नहीं आता । उसे लगता है वह अपने साथ यहाँ से कोई आत्मा ले नहीं गया । इसपर तान्त्रिक उसे डाँटता है और कहता है कि राजदंड से उसने अपनी आत्मा की हत्या कर दी है और इसलिए उसके राजदंड पर खून के दाग है और सोने पर मक्खियाँ बैठी हैं । पर इस बात को वह मानने के लिए तैयार नहीं है । तब उसे इसका प्रमाण देने के लिए तान्त्रिक उसे नीली झील के पास ले जाता है और उसे झुककर देखने कहता है । झील में उसे कुछ नहीं दिखाई पड़ता । दसका अर्थ बताता हुआ दूसरा व्यक्ति उससे कहता है "इससे मालूम होता है यह आदमी अपनी आत्मा कहीं खो आया है ।" फिर उसे बाँसूरी दी जाती है और उसे फूँकने को कहा जाता है । पर बाँसूरी खामोश है । इससे ज्ञात होता है कि उसकी आत्मा मर गयी है ।

तान्त्रिक नीली झील वालों को सावधान करता है कि इस आदमी की परछाई से भी दूर रहे क्योंकि यह आत्माहीन है । इसकी परछाई पड़ने से पसलियों के नीचे पंजे निकल आयेंगे, उसके दिमाग में कीडे रेंगने लगेंगे । अतः घाटी में यह ऐलान किया गया कि कोई घर से बाहर न निकले । आगंतुक इन सब बातों को उसके ऊपर किया गया झूठा आरोप कहता है । तब वह एक प्रयोग करता है ।

उनका विश्वास है कि पवित्रता की राजकुमारी हमारी आदि जननी यह नीली झील कभी झूठ नहीं बोलती । अतः वह पहले व्यक्ति को झील के किनारे खड़े होने को कहता है और मंत्र-पाठ करता है और उस व्यक्ति से पूछता है कि अब इस झील में तुम्हें क्या दिखाई दे रहा हैं, घायल हिरणी दौड़ रही है, काले गुलाम चट्टान उलट रहे हैं, जिसके नीचे फूल की झाडी कुचल रही है । वह सोना बटोर रहा है । कोई लड़की सिसक रही है । फौलाद की भट्टियाँ बच्चे को निगल रही है । प्रजाएँ एक दूसरे का गला घोट रही हैं, मैदानों पर खून के धब्बे हैं । नीली झील खून की तरह लाल हो गई है । उसमें एक औरत कूद पड़ती है ।'' उसके प्रत्येक वाक्य पर तान्त्रिक कहता है, यह उसकी आत्मा है । पहले तो आगंतुक इसे झूठ ही कहता रहत्ता है पर अंत में स्वीकार करता है कि यह सब झूठ कहता रहता है पर अंत में स्वीकार करता है कि यह सब झूठ कहता रहता है पर अंत में स्वीकार करता है कि यह सब सच है । तब लोग उसे नीली झील में फेंकने को कहते हैं, या फिर उसका गला घोंटने को तत्पर होते हैं । कोई उसका सोना लेने को तैयार होता है, और फिर उनमें हाथा-पाई होने लगती है । तांत्रिक उन्हें सावधान करता है कि उनके इस तरह के आचरण से नीली झील में उनकी परछाई हिल रही है । वह कहता हैं ''वापस जाओ ! वरना मैं आदेश दूँगा और पेड़ की डाले अजगर की तरह तुम्हें मरोड देगी । इस आदेश से सभी पीछे हटते हैं । झील में देखकर आगंतुक भयभीत होता है और अपना मुँह ढँक

लेता है । तान्त्रिक आकर जब उसे छूता है तो वह कहता है "मुझे छुओ मत ! मुझे हत्या लगी है । मैंने हत्या की है । उन्हें बुलाओं ।

उसकी इस दशा को देखकर तान्त्रिक उसे कहता है वह अब सत्वहीन और निरर्थक हो गया हे । अतः वह उसके पापों को अपने ऊपर लेने के ले तैयार होना है, और नीली झील से प्रार्थना करता है कि आगंतुक को क्षमा कर दे और उसे एक नयी आत्मा प्रदान करें । वह आगंतुक से कहता है कि उसे अपनी नयी आत्मा की खोज के लिए पुनः उसी देश में जाना होगा जहाँ संघर्ष है और विद्रोह है । उस संघर्ष का अर्थ समझने से, आस्था में विश्वास रचने से नई आत्मा उसे अवश्य मिलेगी । वह कहता है, "डरो मत्ता, घबराओं मत्ता । आस्था से विचलित मत होओ । लोगों में ढूँढो, जनता को छूओ, जिन्दगी में उतरो । तुम्हें नई आत्मा मिलेगी । तुम लौट कर आओगे तो झील फिर तुम्हारा स्वागत करेगी ।"

आगंतुक को संबोधित करता हुआ तान्त्रिक दर्शकों को ही कहता है कि आत्माहीन छाया हमारे बीच है, उसे ढूँढना होगा ।

आगंतुक जो अन्ततः रंगमंच पर रह जाता है, वह कहता है "नीली झील, यह घाटी इसके लोग यह सब मेरी कल्पना थी, मेरा इन्द्रजाल था । असल था सत्य था केवल वह जो दोनों बाँहें फैलाएं अपनी आत्मा ढूँढ रहा है । वह हमारे और तुम्हारे माध्यम से आवेगा । भविष्य की दुनिया उसकी होगी । तब न मैं रहूँगा, न मेरा इन्द्रजाल न तुम, न तुम्हारी कला । रहेगा सिर्फ वह जो आज अपनी नई आत्मा ढूँढ रहा है वह तुम्हारे व्यक्तित्व को छुयेगा, तुम्हारी आत्मा में उतरेगा । क्योंकि तुम्हारे व्यक्तित्व और तुम्हारी आत्मा में उस आत्माहीन को नई आत्मा मिलेगी और वही सत्य है ।"

इस प्रकार एक अतिरंजित कल्पना द्वारा एकांकीकार ने नई आत्मा की खोज के लिए मनुष्य को प्रेरित किया है ।

31C.4. समीक्षा

प्रस्तुत एकांकी में एकांकीकार नीली-झील को आत्मा की पहचान की कसौटी माना है । यह झील ऐसी है जिसमें आत्माहीन व्यक्तियों की परछाई नहीं दिखाई देती । यह झील सत्य की भी कसौटी है । वह मनुष्यों के कुकर्मों को स्पष्ट दिखाती है । धमर्वीर भारती ने इस एकांकी में भौतिक जगत में लिप्त मनुष्य का चित्रण किया है । आज मनुष्य अपने व्यावहारिक जीवन में इतना खोया है, उसे धन, वैभव, बल एवं सुवर्ण के पीछे वह ऐसा पड़ा है कि उसे पता ही नहीं चला कब उसकी आत्मा मर गई, खो गई है । वह उस आत्मा को भूल ही गया है - जो कभी बाँसूरी की धुन में खो जाती थी । फूलों का आनंद लेती थी । वह सत्ता, शासन, राजदंड, संघर्ष, विद्रोह में ऐसा खो गया है कि वह भूल गया है, प्रेम, स्वप्न, आनंद । वह प्रकाश को अंधेरे को ही अपना ध्येय, लक्ष्य मानता चला गया । ऐसे भौतिकवादी, आत्माहीन भटके मनुष्य के लिए कोई व्यक्ति जो हमारा आदर्श हो सकता है प्रार्थना करता है कि उस आगंतुक के लिए एक नयी आत्मा मिल जाय, जिसके सहारे वह आस्था का, प्रकाश का, विद्रोह का सही अर्थ समझ सके ।

प्रस्तुत एकांकी के अंतिम वाक्य ही एकांकी के उद्देश्य को निर्धारित कर देते हैं "असल था, सत्य था केवल यह जो दोनों बाँहें फैलाएं अपनी आत्मा ढूँढ रहा है । वह हमारे और तुम्हारे माध्यम से आवेगा भविष्य की दुनिया उसकी होगी । तब न मैं रहूँगा, न मेरा इन्द्रजाल । न तुम, न तुम्हारी कला । रहेगा सिर्फ वह जो आज अपनी नई आत्मा ढूँढ रहा है । वह तुम्हारे व्यक्तित्व को छुवेगा, तुम्हारी आत्मा में उतरेगा । क्योंकि तुम्हारे व्यक्तित्व और तुम्हारी आत्मा में उस आत्माहीन को नई आत्मा मिलेगी और वही सत्य होगी ।"

धर्मवीर भारती मूलतः कवि हैं, इसलिए उनकी भाषा में

काव्यात्मकता, लयता और सौंदर्य के दर्शन होते हैं । जब तान्त्रिक आगंतुक को उसकी आत्मा की याद दिलाता है, तब जो भाषा-प्रयोग एकांकीकार ने किया है, उसे ऐसा लगता है जैसे यह कविता ही है । द्रष्टव्य है, जब तुम इस नीली झील के किनारे बैठ कर बाँसुरी बजाया करते थे तो लहरों के साथ नाचती हुई एक परछाई आती थी और तुम्हारे पैरों के पास शांत जल में सोई हुई तुम्हारा गीत सुनती थी । वह नीली झील के समान स्वच्छ और गहरी थी, वह झील की सतह पर साँवले कमल की तरह खिलती थी ।

धर्मवीर भारती ने प्रस्तुत एकांकी को ईसा के जन्म के 1950 वर्ष बाद माना है । प्रारंभ में ही लेखक ने काफी विस्तार से रंग संकेत दिया है । अतः रंगमंच पर जो दृश्य दिखाई देगा वह पूर्णतः जादुनगरी, इन्द्रजाल सा होगा । वहाँ के दृश्य, संगीत सब रहस्यमय नगरी का आभास देता है । इस प्रकार के दृश्य से नाटक आरंभ होता है और वही से पाठक की जिज्ञासा शुरु होती है । एकांकी की चरमसीमा उस समय आती हे जब आगंतुक अपनी हत्या को कबुल करता है । कौतुहल इसी क्षण बढ़ता है और पाठका यह जानने को उत्सुक हो उठता है कि क्या तान्त्रिक तथा नीली-झील की संतानें इसकों मार डालेंगे ? पर इसी समय तान्त्रिक, महाभारत के कृष्ण की तरह आगंतुक के सभी पापों को अपने ऊपर लेने के लिए तत्पर हो उठता है और एक नयी संभावना को प्रस्तुत कर, पुनः आगंतुक को नयी आत्मा की खोज के लिए उसी देश में भेजता है, और कहता है कि आस्था में विश्वास रखे और अंधेरे को दूर कर प्रकाश को स्थापित करें ।

प्रस्तुत एकांकी का सबसे आकर्षक भाग एक और है । संपूर्ण एकांकी इन्द्रजाल को प्रस्तुत करती है और अंत में रंगमंच का पात्र दर्शकों में विलीन होकर उनमें से ही एक होता है । यही एक नया किंतु अत्यंत छूता हुआ प्रयोग है पात्र का दर्शकों में एक

हो जाना यही दर्शाता है कि आज हर एक को अपनी नयी आत्मा की खोज करना आवश्यक है ।

31C.5. बोध प्रश्न

1. धर्मवीर भारती ने नीली-झीली के द्वारा कथा संदेश दिया है ?

NOTES

NOTES

ಆದೇಶ ಸಂಖ್ಯೆ : ಕರಾಮುವಿ/ಅಸಾವಿ/4–060/2013–2014 ದಿನಾಂಕ : 24–09–2013
ಒಳಪುಟ : 60 GSM MPM ವೈಟ್ ಪ್ರಿಂಟಿಂಗ್ ಪೇಪರ್ ಮತ್ತು ಹೊರಪುಟ: 170 GSM ಆರ್ಟ್‌ಕಾರ್ಡ್
ಮುದ್ರಕರು : ಅಭಿಮಾನಿ ಪಬ್ಲಿಕೇಷನ್ ಲಿ., ಬೆಂಗಳೂರು–10 ಪ್ರತಿಗಳು : 1,200

Karnataka State Open University

Manasagangotri Mysore - 570 006

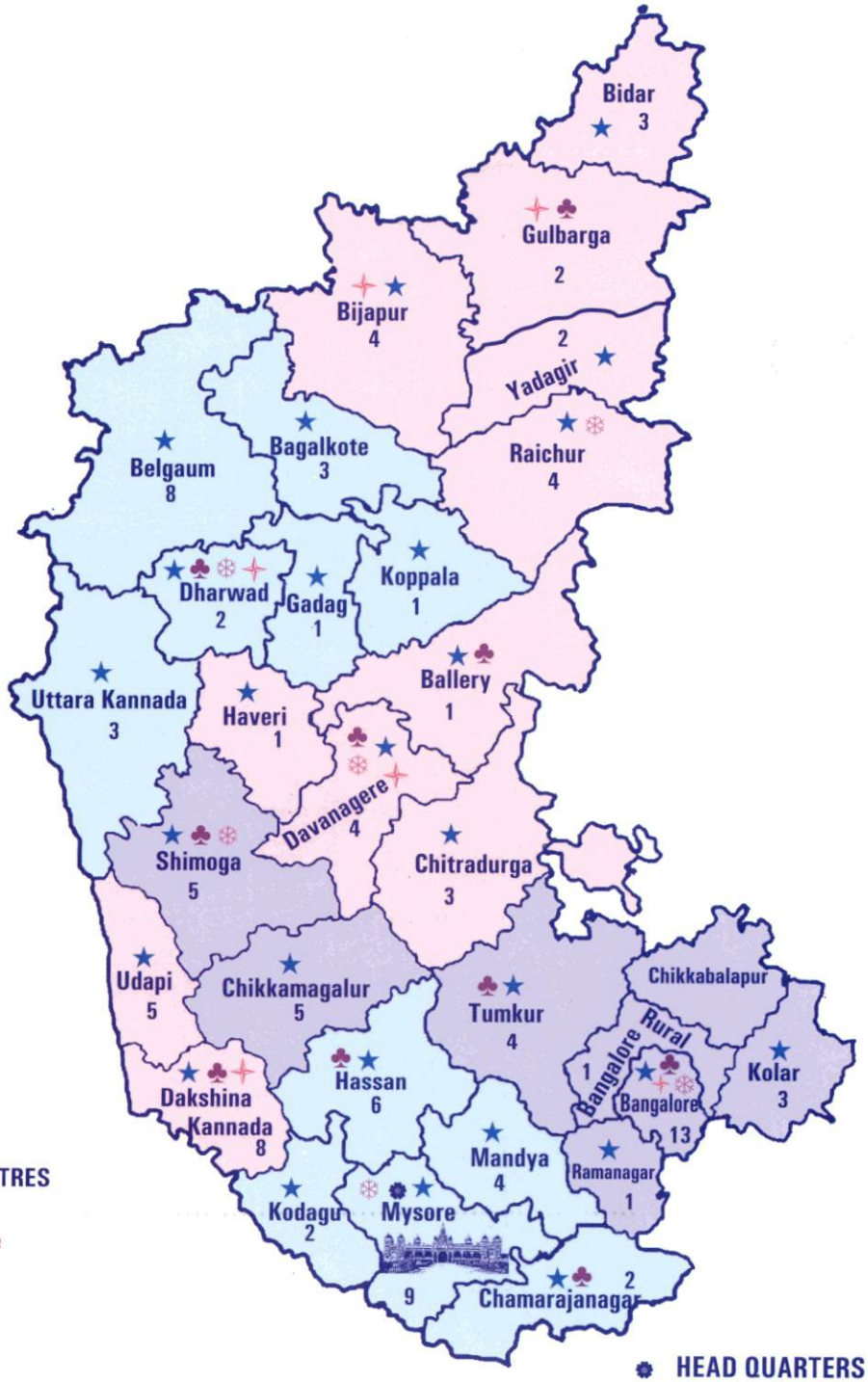

REGIONAL CENTRES

Bangalore
Davanagere
Gulbarga
Dharwad
Shimoga
Mangalore
Tumkur
Hassan
Chamarajanagar
Bellary

HEAD QUARTERS

Total Study Centres : 111

Regional Centres : 10

B.Ed Study Centres : 10

M.Ed Study Centres : 08

Karnataka State Open University

Manasagangothri, Mysore - 570 006.

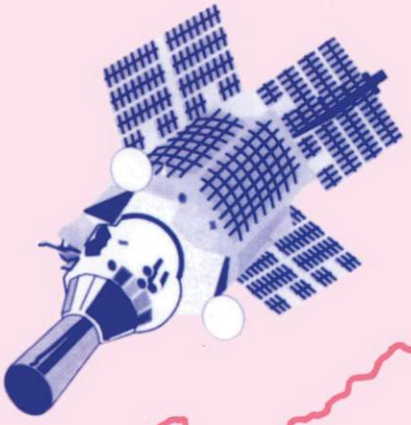

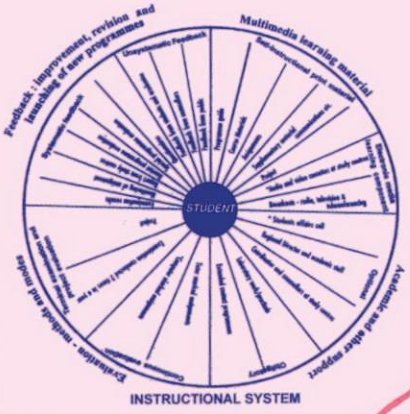

INSTRUCTIONAL SYSTEM